ओ३म्
आर्य जगत्
कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 08 मार्च 2020 | आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र | सप्ताह रविवार, 08 मार्च 2020 से 14 मार्च 2020

फाल्गुन शु. – 14 ● वि० सं०–2076 ● वर्ष 62, अंक 10, प्रत्येक मगंलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 196 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,120 ● पृ.सं. 1–12 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

गोरक्षा अभियान तथा आर्य सम्मेलन के मुख्य अतिथि डॉ. पूनम सूरी 'आर्य शिरोमणि' की सर्वोच्च उपाधि से अलंकृत

पूनम की पाठशाला' का आयोजन तथा दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय की यज्ञशाला का हुआ उद्घाटन

"मेरी तो रग–रग में आर्यसमाज है और हम इसी उद्देश्य से काम कर रहे हैं कि आर्यसमाज को पूर्ण महत्त्व देकर सक्रिय और प्रभावी बनाया जाए। डी.ए.वी. संस्थाएँ भी चरित्र के शिक्षा देने में प्रयासरत हैं।"

यह शब्द आर्यरत्न पूनम सूरी, प्रधान, आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा एवं डी.ए.वी. प्रबंधकर्त्री समिति ने हिसार में कहे। श्री सूरी गोरक्षा महाअभियान तथा विशाल आर्य सम्मेलन के अवसर पर मुख्य अतिथि के रूप में बोल रहे थे।

महात्मा आनन्दस्वामी का श्रद्धापूर्वक स्मरण करते हुए श्री सूरी ने कहा कि परिवार के इस महामना की गोद में हुई दीक्षा ने उन्हें आर्य समाज की एक दृष्टि दी है जिसके

चलते वे प्रादेशिक सभा एवं डी.ए.वी. में आर्य समाज की विचारधारा को संक्रमित करने का संकल्प लेकर क्रियाशील हैं।

श्री पूनम सूरी ने सम्मेलन को संबोधित करते हुए यह घोषणा भी की कि *डीएवी आन्दोलन गोरक्षा और गौसंवर्धन को* लेकर गंभीर है और शीघ्र ही कनीना में एक वैटरीनरी महाविद्यालय एवं चिकित्सालय खोला जाएगा। लगभग 10,000 से अधिक आर्यजनों ने इस अभियान तथा सम्मेलन में भाग लिया।

इस सम्मेलन में श्री हरि सिंह सैनी ने मान्य प्रधान जी का स्वागत किया। श्री हंस राज गंधार, उप प्रधान तथा महेश चोपड़ा, सचिव इस अवसर पर विशेष रूप से उपस्थित हुए। डॉ. शिवरमण गौड़, श्रीमती जे. काकड़िया और श्री जे.पी. शूर (तीनों निदेशक डी.ए.वी.) भी उपस्थित रहे।

आर्य सम्मेलन के अध्यक्ष सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान स्वामी आर्य वेश जी ने अपने उदबोधन में प्रादेशिक सभा एवं डी.ए.वी. को उन्नति की ओर ले जाने के लिए डॉ पूनम सूरी जी को बधाई देते हुए इन दोनों संस्थानों में आर्य समाज के प्रचार और प्रसार को लेकर उनके नेतृत्व की हार्दिक प्रशंसा की। वैदिक संस्कृति केन्द्र, हिसार की ओर से इस शुभ अवसर पर श्री सूरी को 'आर्य शिरोमणि' की सर्वोच्च उपाधि से सम्मानित किया गया। वैदिक संस्कृति के संस्थापक प्रधान श्री उपल तथा अन्य पदाधिकारियों की ओर से इस अवसर पर एक अभिनंदन पत्र पढ़ा गया जिसमें श्री सूरी के प्रेरणादायी व्यक्तित्व, उनकी शालीनता ओर प्रखर विचारधारा का बहुत ही प्रशंसापूर्ण शब्दों में उल्लेख किया गया।

हिसार के प्रवास में श्री पूनम सूरी का समय अत्यंत व्यस्ततापूर्ण रहा। आर्य सम्मेलन की पूर्व संध्या में दयानंद ब्राह्म महाविद्यालय के सभागार में **'पूनम की पाठशाला'** का आयोजन किया गया जिसमें हिसार तथा आसपास के डी.ए.वी. विद्यालयों से आए लगभग 250 से अधिक अध्यापकों ने मान्य प्रधानजी के प्रेरक उद्बोधन को बड़े उत्साह से सुना। उनके प्रेरक उद्बोधन को सुनने के पश्चात् अध्यापकों ने कहा कि हम सभी प्रधानजी के द्वारा दिखाए मार्ग पर चलेंगे।

इस आयोजन के बाद दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय की नवनिर्मित यज्ञशाला का उद्घाटन डॉ. पूनम सूरी एवं श्रीमती मणि सूरी के कर–कमलों से सम्पन्न हुआ। महाविद्यालय के ब्रह्मचारियों ने अपने मधुर मंत्रोच्चारण से वातावरण को यज्ञमय कर दिया। मान्य प्रधानजी ने प्राचार्य, डॉ. प्रमोद योगार्थी को इस उपलक्ष्य में बधाई व शुभकामनाएँ दी।

इस श्रृंखला में डॉ. पूनम सूरी ने डी.ए.वी. पुलिस पब्लिक स्कूल में "अटल टिंकरिंग लैब" का उदघाटन किया। इस प्रयोगशाला का मुख्य उद्देश्य विज्ञान के क्षेत्र में रुचि उत्पन्न करना है।

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार, 08 मार्च 2020 से 14 मार्च 2020

जंगम-स्थावर का राजा

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

इन्द्रो यातोऽवसितस्य राजा, शमस्य च शृङ्गिणो वज्रबाहुः।
सेदु राजा क्षयति चर्षणीनाम्, अरान्न नेमिः परि ता बभूव।।

ऋग् 1.32.15

ऋषिः **हिरण्यस्तूपः आङ्गिरसः**। देवता **इन्द्रः**। छन्दः **त्रिष्टुप्।**

● (**वज्रबाहु**) वज्रभुज (**इन्द्रः**) परमेश्वर (**यातः**) चलने–फिरने वाले का, (**अवसितस्य**) निश्चल का (**शमस्य**) शांत का, (**शृङ्गिण च**) और तीक्ष्ण वृत्ति वाले का (**राजा**) राजा [है]। (सः इत्) वही (**चर्षणीनां**) मनुष्यों का (**राजा**) राजा [होकर] (**क्षयति**) निवास कर रहा है। (**अरान्**) अरों को (**नेमिः न**) परधि के समान [वह] (**ता**) उन्हें (**परि बभूव**) चारों ओर से व्याप्त किये हुए है।

● मैं अपने इन्द्र प्रभु का क्या वर्णन करुँ, कैसे उसकी महिमा का गान करूँ? उसकी महिमा के गीत गाने को जो जी चाहता है, पर वाणी में शब्द नहीं मिलते। फिर भी टूटे–फूटे शब्दों में ही सही, कुछ तो गुनगुना लूँ, कुछ तो अपने मन की साध पूरी की लूँ। मेरा प्रभु चलने फिरनेवाले जंगम अर्थात् चेतन जगत् और निश्चल होकर बैठ स्थावर अर्थात् जड़–जगत् दोनों का राजा है, दोनों पर उसका अधिपत्य है। वह पशु, पक्षी,सरीसृप, मानव आकद तथा वन, पर्वत, नदी, सागर, सूर्य, चन्द्र आदि सबका अधिष्ठाता और व्यवस्थापक है। उसकी आज्ञा के बिना एक पत्ता तक नहीं हिल सकता। वह शान्त–जीवन व्यतीत करने वाले, तप–साधन में निरत रहने वाले शान्तवृत्ति ऋषि–मुनियों का भी राजा है और तीक्ष्णशृंग अर्थात् तीक्ष्ण साधनों का अवलम्बन करने वाले तीक्ष्णवृत्ति रजोगुणियों का भी राजा है, नियन्त्रणकर्ता है। वह वज्रबाहु है, भुजा में वज्र धारण किये है और उच्छृङ्खलों को उनके उच्छृङ्खल कर्मो के अनुसार यथायोग्य दण्ड दे रहा है। कोई उसकी दण्ड–व्यवस्था से कितना ही बचना चाहे, बच नही सकता। वही हम सब 'चर्षणियों' का कृषिकर्ता मानवों का भी राजा होकर निवास कर रहा है, चाहे हम अपनी मनोभूमि का कर्षण करके उसमें सद्गुणों का बीज वपन कर आन्तरिक सम्पदा को लहलहाते हों, चाहे हल चलाकर, उत्तम बीज बोकर भूमि को सस्यश्यामला बनाते हों।

जैसे रथ–चक्र की नेमि समस्त अरों को चारों ओर से व्याप्त किये होती है और अपने में थामे होती है, वैसे ही जगत् का राजा वह इन्द्रदेव जगत् की वस्तुओं के चारों और व्याप्त होकर उन्हें सहारा दिये हुए है, तभी संसार के सब पदार्थ पृथक्–पृथक् इकाई होते हुए भी परस्पर सामंजस्य रखे हुए हैं और विश्व के चक्र को चला रहे हैं। अन्यथा उनकी स्थिति वैसी ही हो जाए, जैसी नेमि के टूट जाने पर रथ–चक्र के घरों की होती है, तब विश्वचक्र –प्रवर्तन ही समाप्त हो जाए।

आओ, हम एक स्वर से अपने उस राजराजेश्वर इन्द्र प्रभू के चरण–चंचरीक बनकर उसकी महिमा का गुंजार करें।

❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

प्रभु दर्शन

● **महात्मा आनन्द स्वामी**

"चिन्ता से न केवल शरीर की शक्ति का ह्रास तथा मानव–शक्ति का नाश होता है, प्रत्युत इससे मनुष्य का किया हुआ कार्य भी निचले दर्जे का होने लगता है। यह मनुष्य की योग्यता को कम कर देती है। अपने काम को व्यक्ति सम्पूर्ण सुचारु रूप से नहीं कर पाता जब उसका मन क्षुब्ध तथा चिंन्तित हो। मन अपनी सम्पूर्ण शक्ति और योग्यता से काम करे, इसके लिए आवश्यक है कि वह दुःखों, चिन्ताओं, विकारों तथा क्षोभों से मुक्त हो। "कितने ही रोग केवल भय से और भय के विभिन्न रूपों से पैदा होते हैं।

–अब आगे...

जो माताएँ अपने बच्चों को शैशवकाल में या बाल्यकाल में भयभीत करती रहती हैं, या जो माता–पिता अपनी सन्तान को दबाये ही रखते हैं, वे उनके साथ शत्रुता करते हैं। बच्चों को सर्वदा उत्साहित करते रहना चाहिए कि वे सदा प्रसन्न रहने का स्वभाव डालें। दिन में एक बार तो खूब खुलकर हँसें। जो बालक खुलकर हँसते हैं, उनको छाती के रोग नहीं होते। छाती खूब फैलती है और रक्त का संचार प्रत्येक नस–नाड़ी में तीव्रता से होता है। प्रश्न–उपनिषद् में बताया गया है कि मनुष्य के शरीर में 72 करोड़ 72 लाख 10 हज़ार दो सौ एक नाड़ियाँ हैं। यदि ये सब–की–सब नाड़ियाँ दिन में कम–से–कम एक बार न खुलें तो रक्त रुक जाता है। नाड़ियों में मैल जमने लगता है और फिर रोग उत्पन्न हो जाते हैं। इन सारी नाड़ियों को खोलने के लिए खुलकर हँसना बहुत अच्छा साधन है, परन्तु हँसेगा कौन? जिसके संकल्प पवित्र और ऊँचे होंगे। जो दिनभर छल, कपट और चार सौ बीस की ही बातें सोचता रहता है, वह खुलकर कभी हँस नहीं सकता।

मन एक मन्दिर है। मनुष्य को यह इसलिए नही सौंपा गया कि वह इसमें भय, चिन्ता, निराशा, ईर्ष्या, द्वेष और नीचता के विचारों का कूड़ा–करकट जमा करता रहे। मन का मन्दिर तो सदा पवित्र रहना चाहिए। इसको प्रसन्नता, आशा, निर्भयता, प्रेम, उत्साह और इसी प्रकार के ऊँचे उल्लास–भरे विचारों के पुष्पों से सजाना चाहिए। अपवित्र विचारों तथा पतित करनेवाले संकल्पों से सुरक्षित करने का यही साधन है कि मन को प्रेम, प्रभु–भक्ति, परोपकार तथा उत्साहपूर्ण संकल्पों से सदा परिपूर्ण रखा जाय।

अब सवाल है–मन में सत्य, शिव और दृढ़ संकल्प कैसे पैदा किया जाय? आप कहेंगे, मन तो चाहता है कि विचार अच्छे हों, चिन्ता निकट न आए, परन्तु परिस्थितियाँ ही ऐसी है कि मानव बेबस होकर चिन्ता के सागर में डूब जाता है। बात गलत नहीं है, परन्तु ऐसा कहने वालों को यह नहीं भूलना चाहिए कि जीवन में हर तरह का मौसम आता है। गर्मी भी और शीत भी, बसन्त भी और पतझड़ भी, झुलसा देने वाली धूप भी होती है, ठिठुरा देनेवाला शीत भी होता है और मूसलाधार बरसने वाली बरसात भी होती है। अच्छे–बुरे दिन सभी पर आते है। भगवान् राम से बढ़कर तो कोई विभूति हमारे पास नहीं। क्या उन पर कठिन दिन नहीं आये? राजपाट छोड़कर चौदह बरस तक वन–वन में भटकना पड़ा। महलों को छोड़कर पर्णकुटी में रहना पड़ा। सीता जैसी साध्वी देवी पर विपत्ति आई। कितने बड़े–बड़े धर्मात्मा व्यक्तियों को भी विपत्ति के दिन देखने पड़े, तो आजकल के नर–नारियों की क्या गणना?

कष्ट–क्लेश के दिन तो आते ही हैं। धीर पुरुष वह है और वीरांगना नारी वह है जो विपत्तियों और कष्ट के दिनों को धैर्य के साथ काट दे। अधीर न हो। घबराये नहीं। ऐसे धीर नर–नारी के लिए कष्ट, कष्ट नहीं रहता। अपने संकल्पों से वह सहन–शक्ति पैदा कर चुका होता है। हमारे शास्त्रों ने तो हमें जीवन इसी प्रकार व्यतीत करने का आदेश दिया है कि कष्ट, कष्ट ही प्रतीत न हों। उपनिषद् में तो यहाँ तक लिखा है कि रोगी होकर भी अपने–आपको रोगी न समझो। यही समझो कि आप तप, तप रहे हैं। बृहदारण्यक–उपनिषद् में लिखा है–

एतद्वै परमं तपो यद् व्याहितस्तप्यते।।

5/11/1।।

"यह परम तप है, जो रोगी हुआ तपता है।" इसी को कहते हैं हर हाल में खुशहाल रहना। इसी को स्वामी रामतीर्थ जी ने 'हालमस्त' कहा था। मैं लिख चुका हूँ कि भक्त अपने–आपको यज्ञ–रूप समझे। यज्ञ में 'उपसदा' और 'दीक्षा' का वर्णन आता है। यदि भक्त खाता–पीता और खुशियाँ मनाता है तो समझना चाहिए कि वह यज्ञ की 'उपसदा' को पूर्ण कर रहा है। यदि भक्त भूखा–प्यासा रहता है, कष्ट सहता है, खुशियों से दूर चला गया है, तो समझना चाहिए कि वह यज्ञ की 'दीक्षा' पूर्ण कर रहा है। प्रयोजन यह है कि भक्त किसी भी अवस्था में मन को निर्बल न होने दे। यही द्वन्द्व–सहन है। गर्मी–सर्दी, दुःख–सुख, नर्मी–सख्ती, हर अवस्था में एकरस रहना ही दृढ़–संकल्प बनने की पहली सीढ़ी है। मनुष्य विपत्तियों में घिरा हुआ भी निराश न हो। जीवन–यात्रा में कितनी ही बार पाँव फिसल भी जाते हैं, चोटें भी लगती है; परन्तु साहसी यात्री का यह कर्त्तव्य है कि फिसलकर फिर सँभले। चोट खाकर, गिरकर

शेष पृष्ठ 09 पर ☞

ऋषि दयानन्द का भक्तिवाद

● स्मृतिशेष डॉ. भवानीलाल भारतीय

ऋषि दयानन्द के धार्मिक तथा सामाजिक सुधाार कार्य में अधिक समय रहने तथा उनके राष्ट्रीय जागरण के प्रथम पुरोधा होने के कारण अनेक लोगों मे यहीं धारणा बन गई हैं कि भारत की आध्यात्मिक चेतना को जगाने तथा भगवत् भक्ति के प्रसार में उनका योगदान अल्प है। ऐसा विचार उन लोगों का हैं जिन्होंने दयानन्द का सूक्ष्म अध्ययन नही किया। गहराई से देखें तो पता चलता है कि दयानन्द का गृहत्याग और संन्यास ग्रहण जिस विशिष्ट लक्ष्य को ध्यान में रखकर हुआ था, उसके पीछे अध्यात्म ज्ञान को प्राप्त करने की उनकी तीव्र ललक ही थी। शिवरात्रि–प्रसंग से उन्होंने सीखा कि निखिल विश्व ब्रह्माण्ड का नियंत्रण करने वाली सत्ता जड़ नहीं हो सकती। वह कल्याणकारी शिव कौन है? तथा कैसा है जिसकी वंदना वेदों में अनेकत्र मिलती है? अपने घर में घटित हुए मृत्यु प्रसंगों ने उन्हें जिन्दगी और मौत के राहस्य को जानने की प्रेरणा दी। संन्यास ग्रहण करने के पश्चात् उन्होंने अपने योग गुरुओं से उस 'राजयोग' का प्रशिक्षण प्राप्त किया जो समाधि सिद्धपूर्वक परमात्मा का साक्षात्कार कराता है। भावी जीवन में परम देव परमात्मा के प्रति उनका प्रणत भाव सदा रहा। अपने महान् कार्यों की पूर्ति में उन्होंने परमात्मा देव की सहायता की याचना की और आजीवन एक आस्तिक भक्ति का जीवन बिताकर अपने आराध्य के प्रति स्वयं को अर्पण कर दिया। स्वामीजी की धारणा थी कि धर्म, समाज ओर राष्ट्र को समुन्नत करने का जो महद् अभियान उन्होंने चलाया है उसमें परमात्मा की प्रेरणा तथा सहायता ही सर्वोपरि रही है। वे परमात्मा के अनन्य उपासक थे। समर्पण भाव को लेकर जगन्नाथ के सूत्रधार के सम्मुख आने वाले से एक ऐसे विन्रम सेवक थे जिन्होंने अत्यन्त भाव प्रवण होकर अपने आराध्य देव से कहा था–'आपका तो स्वभाव ही है कि अंगीकृत को कभी नहीं छोड़ते।' शास्त्रार्थ समर में उतरने से पहले दयानन्द दीर्घकाल तक परमात्मा की उपासना करते थे, मानों अपने आराध्य से सत्य पक्ष की विजय दिलाने की प्रार्थना करते हो। लोकहित के अपने सभी कार्यों और अनुष्ठानों में वे परमात्मा को अपना परम सहायक मानते थे।

छः दर्शन शास्त्रों की तर्ज पर कालान्तर में नारद और शाण्डिल्य के नाम से भक्ति सूत्र रचे गए। उनमें सूत्र शैली से भक्ति तथा उसके आनुषंगिक प्रसंगों की विस्तृत मीमांसा प्रस्तृत की गई है। आचार्य शाण्डिल्य ने भक्ति को इस प्रकार परिभाषित किया है– **या परा अनुरक्तिः ईश्वरे सा भक्तिः।** अर्थात् परमात्मा के प्रति पराकोटि की अनुरक्ति (प्रेम) ही भक्ति है। इन ग्रंथों में नवधा भक्ति का जो उल्लेख मिलता है उससे अनुमान होता है कि भक्ति सूत्रों की रचना उस युग में हुई थी जब पौराणिक मत का प्रचलन हो चुका था तथा जनता में प्रतिमा पूजन, अवतार वाद आदि की धारणाएं चल पड़ी थीं। इन ग्रन्थों में बृज गोपिकाओं के आदि के सन्दर्भ दिए गए हैं, वे इन्हें पुराणों के परवर्ती काल का होना बताते हैं।

ऋषि दयानन्द के परमात्मा की भक्ति और व्यक्ति का मनोनिवेश करने वाला एक ग्रन्थ लिखा था 'आर्याभिविनय' उनका विचार था चारों वेद संहिताओं में प्रत्येक से न्यून से न्यून पचास मंत्रों को लेकर उनकी भगवत्भक्ति से ओतप्रोत भावपूर्ण व्याख्या की जाये। इस ग्रंथ में प्रथम तथा द्वितीय प्रकाश (ऋग्वेद के 53 तथा यजुर्वेद की 55 मंत्र युक्त) लिखे गए तथा छपे। अवशिष्ठ साम तथा अथर्ववेद के विनय प्रधान मंत्रों की परमात्मा की स्तुति है या प्रार्थना, इसका संकेत वे मंत्रारंभ में कर देते हैं। ग्रंथारंभ के स्वरचित श्लोकों में दयानन्द ने परमात्मा की भावपूर्ण स्तुति की है।

सर्वात्मा सच्चिदानन्दोऽनन्तो यो न्यायकृच्छुचिः। भूयात्तमां सहायो नो दयालुः सर्वशक्तिमान्।

अर्थात् जो परमात्मा सबका आत्मा, सत्, चित्, आननदस्वरूप, अनन्त, अज, न्याय करने वाला, निर्मल, सदा पवित्र, दयालु सब सामर्थ्य वाला, हमारा इष्टदेव है, वह हमको सहाय नित्य होवे।

साथ ही इन श्लोकों में वे यह संकेत देते हैं कि समस्त लोगों के हित तथा परमात्मा के ज्ञान के लिए वे मूल मंत्रों के साथ–साथ उनको लोक–भाषा में व्याख्यान जन साधारण को बोध कराने के लिए दे रहे हैं। दयानन्द की सम्पति में जो ब्रह्मविमल, सुखकारण, पूर्णकाम, तृप्त, जगत् में व्याप्त है वहीं वेदों से प्राप्य है। जिसके मन में इस ब्रह्म की प्रकटता (यथार्थ ज्ञान) है, वही मनुष्य ईश्वर का आनन्द का भागी है और वही सदैव सबसे अधिक सुखी है। ऐसे मनुष्य को धन्य मानना चाहिए। इन प्रास्वाविक श्लोकों से हमें दयानन्द के भक्तिवाद को समझने में सहायता मिलती है।

आर्याभिविनयम् की रचना केवल ईश्वर भक्ति में लोगों को नियोजन करने के लिए ही की गई हो, ऐसी बात नहीं है। दयानन्द मध्यकाल के अनेक भक्तों की भाँति लोगों को भाग्यवाद तथा पुरुषार्थहीनता का पाठ पढ़ाने वाले नहीं थे। यही कारण है कि आर्याभिविनय में एक और प्रभुभक्ति तथा अपने आराध्य के प्रति समर्पण की भावना दिखाई पड़ती है। तो साथ ही उस –राजाधिराज परमात्मा' से स्वराज्य तथा आर्यों (सत्पुरुषों) के अखण्ड चक्रवर्ती साम्राज्य की याचना भी की गई है। परमात्मा के प्रति दयानन्द की अनन्य प्रीति को देखना चाहे तो इस ग्रन्थ में सर्वप्रथम व्याख्यात ऋग्वेद के मंत्र **'श नो मित्रः शं वरुणः'** की व्याख्या के आरंभ में परमात्मा के प्रति किए गए सम्बोधनों की छटा को देखें। यहाँ न्यूनातिन्यून 27 सम्बोधनों से दयानन्द ने अपने आराध्य परमात्मा देव को सम्बोधित किया है। इनमें से अनेक सम्बोधनों में अनुप्रास प्रधान शब्दों का सौन्दर्य दर्शनीय है। यथा– विश्वविनोदक, विनयविधीप्रद, विश्वासविलासक तथा निर्मल, निर्सह, निरामय, निरुप्रदव आदि एक ओर यदि परमात्मा को 'सज्जन सुखद' कहा तो साथ ही उसे दुष्ट सुताडन' कहना भी वे नही भूले। दयानन्द की दृष्टि में परमात्मा चतुर्विध पुरुषार्थ के प्रदाता हैं– वे यदि धर्म सुप्रापक हैं तो अर्थ– सुधारक तथा सुकामवर्द्धक भी हैं। मोक्ष प्रदाता तो वे हैं ही– यदि वे 'राज्य विधायक' हैं तो 'शत्रु विनाशक' भी है। वस्तुतः इस ग्रंथ को लिखकर दयानन्द ने भारत के भक्ति सिद्धान्तों में एक नूतन क्रांति की थी, अतः दयानन्द के भक्तिवाद का तात्विक अध्ययन अपेक्षित है।

इस ग्रंथ के अन्य मंत्रों के व्याख्यानों में उन्होंने परमात्मा के लिए जो सम्बोधन सूचक शब्द लिखे हैं, वे भी व्यंजनापूर्ण हैं। जब वे परमात्मा को 'महाराजाधिराज परमेश्वर' कहकर सम्बोधित करते हैं तो उनकी प्रार्थना होती है– 'हमको साम्राज्याधिकारी सद्यः कीजिए। उनकी विनय है कि हम सुनीतियुक्त हों जिससे कि हमारा स्वराज्य अत्यन्त बढ़े। (प्रार्थना सं. 17) **'वय' जयेम त्वया युजा'** (ऋ 1/102/4) मंत्र की व्याख्या के आरंभ में उन्होंनें परमात्मा को 'महाधनेश्वर' (मधवन्) तथा 'महाराजा धिराजेश्वर)' कहकर पुकारा तथा उसने चक्रवर्ती राज्य और साम्राज्य (रूपी) धन को प्राप्त कराने की प्रार्थना की। यह ईश्वरभक्त दयानन्द ही है हो जो परमात्मा से आर्यों के अखण्ड भी विनय करता है। कि 'अन्य देशवासी' राजा हमारे देश में कभी न हों तथा हम लोग पराधीन कभी न हों। (यजुर्वेद के मंत्र 37/14 **'इषे पिन्वस्व ऊर्जे पिन्वस्व'** की व्याख्या में) सामान्यतया भक्त अपने आराध्य से सुख, सौभाग्य आरोग्य, धन–धान्य, कीर्ति, ऐश्वर्य आदि की याचना करता है। दयानन्द ने अपने परमात्मा से देश के लिए स्वराज्य तथा शिष्टजनों (आर्यों) के साम्राज्य की याचना के प्रति जो सम्बोधन शब्द प्रयोग किये हैं वे भी विशिष्ट अर्थवता लिये हैं। शतक्रतों (अनन्त कार्येश्वर), महाराजाधिराज परमेश्वर, सौख्य–सौख्य–प्रदेश्वर, सर्वविद्यम आदि। वस्तुतः अनन्त गुणों वाले परमात्मा के सम्बोधन भी अनन्त ही होंगे।

परमात्मा की भक्ति दिखाने की वस्तु नहीं है। मध्यकाल में मूतिपूजा, नाम जप, तिलक, कण्ठी–छाप आदि साम्प्रदायिक प्रतीकों के धारण को भक्ति का साधन माना गया था। दयानन्द की सम्मति में परमात्मा के विविध गुणों के वाचक शब्दों के उल्लेखपूर्वक उस परम सत्ता को नमन करना ही उसकी भक्ति का उत्कृष्ट रूप है। यदि हम उनके द्वारा रचित गंथों के आरंभ के मंगल सूचक वाक्यों को देखें तो ज्ञान होगा कि स्वामीजी के लिए परमात्मा क्या है? और कैसा है? यहाँ कुछ ऐसे ही ग्रन्थारंभ में लिखे गये नमस्कार विधायक वाक्य दिए जो रहे हैं। जो दयानन्द की दृष्टि में परमात्मा की स्वरूप तथा गुणों के ज्ञापक है।

1. **ओ३म् सच्चिदानन्देश्वरायम नमः –** सत्यार्थ प्रकाश
2. **ओ३म् तत्सत्परब्रह्माणे नमः –** आर्याभिविनय
3. **ओ३म् ब्रह्मात्मे नमः –** वर्णोच्चारण शिक्षा
4. **ओ३म् खम्ब्रह्मा।** – काशी शास्त्रार्थ
5. **ओ३म् खम्ब्रह्मा।** – सत्यधर्म विचार
6. गोकरुणानिधि में परमात्मा का स्मरण इस प्रकार किया गया है। **'ओ३म् नमो विश्वम्भराय जगदीश्वराय'** इसमें दयानन्द का भाव यह है कि जो विश्वभर में हैं वहीं तो गो आदि उपयोगी प्राणियों का भरण–पोषण करने का भी सामर्थ्य रखता है। जो ईश्वर सर्वशक्तिमान् है उसमें गौ आदि की रक्षा करने का भी सामर्थ्य है।
7. **ओ३म् नमो निर्भ्रमाय जगदीश्वराय–** अनुभ्रमोच्छेदन

वेद के निर्भ्रान्त ज्ञान को देने वाला परमात्मा स्वयं निर्भ्रम है। ऐसे सार्थक नमस्कार वाक्य लेखन की परमात्मा के प्रति सच्ची भक्ति दर्शाते हैं।

नन्दनवन,
जोधपुर राजस्थान

सत्यार्थ प्रकाश में आधुनिक विज्ञान

● वेद प्रकाश गुप्ता

हम आधुनिक विज्ञान को विज्ञान भी कहते हैं जो वर्तमान के अधिकांश विद्यालयों में पढ़ाई जाती है। इसी विषय के पढ़े बच्चे इंजीनियर, डॉक्टर, अंतरिक्ष विज्ञानी आदि भी बनते हैं। हम सभी जानते है कि ऋषि दयानंद जी विज्ञान के ज्ञान को बहुत अधिक महत्त्व देते थे क्योंकि इसी के द्वारा बहुत से तथ्यों की सत्यता परखी जा सकती है। हम विज्ञान के आधार पर दैनिक जीवन के कई कार्यकलापों एवं कर्मकांडों की उपयोगिता, प्रक्रिया, सर्वलाभदायक या हानिकारक होने को जान सकते हैं एवं सिद्ध कर सकते हैं। विज्ञान के ज्ञान को ही हम उत्तरोत्तर वृद्धि कर हम नये नये सत्य तथ्यों एवं उपकरणों का आविष्कार कर रहे हैं। जब स्वामी दयानंद जी ने सत्यार्थ प्रकाश आदि पुस्तकों को लिखा होगा, उस समय करीब 1870 में, पूरे भारत में 5 से भी कम विश्वविद्यालयों और 50 से भी कम कॉलेज में ही विज्ञान की शिक्षा दी जाती रही होगी और उस समय विज्ञान का ज्ञान, आज की अपेक्षा नगण्य रहा होगा। उन्होंने पुस्तकों के ज्ञान एवं प्रत्यक्ष प्रमाण, प्रत्यक्ष में देखे एवं अनुभव के आधार पर कई वैज्ञानिक तथ्यों को लिखा है जो आज भी विज्ञान के अनुसार उचित एवं अनुकरणीय है जिसका एक उदाहरण है, सत्यार्थ प्रकाश समुल्लास 4 के पहले पृष्ठ पर लिखा तथ्य कि निकट संबधियों में विवाह न करने का कारण", जो वर्तमान के रोधों में भी सिद्ध हुआ है। गूगल सर्च पर उपलब्ध साहित्य के अनुसार एक अध्ययन से पता चला है कि निकट संबंधियों में विवाह करने वालों में से 97 प्रतिशत परिवारों के बच्चे अनुवांशिक रोग से पीड़ित थे। उन्होंने विज्ञान का ज्ञान अपने शिष्य से ही प्राप्त किया होगा क्योंकि उस समय विज्ञान की कोई पुस्तक हिंदी अथवा संस्कृत भाषा में उपलब्ध नहीं रही होगा। स्वामी दयानंद जी के आत्मकथा से विदित होता है कि वह मृत्यु के पहले लगभग सोलह हज़ार रुपया, दो आर्य विद्यार्थियों को जर्मनी को विज्ञान की उच्चशिक्षा प्राप्त करने हेतु इकट्ठा कर चुके थे। उनके मृत्यु के बाद यह कार्य नहीं हो सका। इन सब के बावजूद भी उन्होंने अपने पुस्तकों में विज्ञान के ज्ञान का भरपूर उपयोग कर लिखा है। उन्होंने बहुत से वैज्ञानिक तथ्यों को सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है। पाठकों के संज्ञानार्थ, प्रकाशक मानव उत्थान संकल्प संस्थान, 46/5 कम्यूनिटी सेंटर, ईस्ट ऑफ कैलाश, नई दिल्ली–110 065 सन् 2005 में प्रकाशित सत्यार्थ प्रकाश में लिखे विभिन्न पृष्ठों में वैज्ञानिक तथ्यों को, विज्ञान की महत्ता दर्शाने हेतु लिखा जा रहा है। अन्य प्रकाशकों द्वारा प्रकाशित सत्यार्थ प्रकाश में मात्र पृष्ठ नंबर भिन्न हो सकते हैं।

1, पृष्ठ 33, समुल्लास 2 में – "उत्तर–कहिए ज्योतिर्वित्! जैसी यह पृथ्वी जड़ है, वैसे ही सूर्यादि लोक हैं। वे ताप और प्रकाशादि से भिन्न कुछ भी नहीं कर सकते। क्या ये चेतन हैं, जो क्रोधित होकर दुःख और शान्त होकर सुख दे सकें?"

विज्ञान के तथ्य–विज्ञान से हम सभी जानते हैं कि सूर्य एक जड़ पदार्थ और आग का बहुत ही बड़ा गोला है जो हमें ताप और प्रकाश ही दे सकता है और इसके अतिरिक्त कुछ भी नहीं। इसमें चेतनता के कोई गुण नही हैं। यह पृथ्वी से कई करोड़ों किलोमीटर दूर है।

2, पृष्ठ 41, समुल्लास 3 में–''उत्तर–जो तुम पदार्थविद्या जानते तो कभी ऐसी बात न कहते। क्योंकि किसी द्रव का अभाव नहीं होता। देखो, जहाँ होम होता है वहां से दूर देश में स्थिति पुरुषों को नासिका से सुगन्ध का ग्रहण होता है वैसे दुर्गंध का भी। इतने से समझ लो कि अग्नि में डाला गया पदार्थ सूक्ष्म कण के रूप में फैल कर वायु के साथ दूर देश में जाकर दुर्गंध की निवृति करता है।''

विज्ञान के तथ्य–विज्ञान में पदार्थ विद्या का अध्ययन भौतिक शास्त्र एवं रसायन शास्त्र में होता है जिसके अनुसार किसी पदार्थ का नाश यानी अभाव नहीं होता है और समस्त वनस्पतिए पदार्थों के घटक, उड़नशील पदार्थों को गर्म कर वाष्प यानी वायुरूप में बदल कर हवा में फैला सकते हैं। विज्ञान से ही हम जानते हैं कि तीव्र प्रदीप्त अग्नि जो ज्वालायुक्त अग्नि ही होती है, में जब कोई जल सकने वाले पदार्थ जैसे की लकड़ी, घृत, तेल, समस्त वनस्पति पदार्थ डाले जाते हैं तब वह सब भी ज्वाला के साथ जल जाते हैं यानि दहन हो जाते हैं। हम किसी पदार्थ की अवस्था और स्वरूप ही बदल सकते हैं। उसका नाश नहीं कर सकते हैं।

3, पृष्ठ 86, समुल्लास 4 में–"चौथा वैश्वदेव–अर्थात् जब भोजन तैयार हो तब जो कुछ भोजनार्थ बने, उसमें से खट्टा, लवणान्न और क्षार को छोड़ कर घृत–मिष्टयुक्त अन्न लेकर चूल्हे से अग्नि लेकर अलग धर निम्नलिखित मंत्रों से आहुति और भाँग करें।''

विज्ञान के तथ्य–यह एक बलिवैश्वदेव यज्ञ की प्रक्रिया, साधन एवं सामग्री लिखा है जिससे समुल्लास 3 में लिखे यज्ञ के लक्ष्यों की प्राप्ति होती है। जो विज्ञान एवं प्रत्यक्ष अनुभूति एवं देखने और सूँघने में भी सत्यापित होती है। घर में बनी उपरोक्त व्यंजनों को चूल्हे की अग्नि जो कोयला या कंडा की ही अग्नि होती है, में आहुतियाँ देने से इन पदार्थों का दहन नहीं होता है, बल्कि यह पदार्थ गर्म होकर मात्र सूक्ष्म कणों में अलग–अलग होकर भाप यानी वाष्प बनकर हवा में फैलती है। इन वाष्प कणों में घृत एवं हव्य के मूल रसायनों के समस्त गुण सुगंध, स्वाद औषधी गुण आदि यथावत् ही रहते हैं। कुछ भी नष्ट नहीं होता है। यह रसायन समस्त मनुष्यों, जानवरों, पशु–पक्षियों के श्वास लेने पर ग्रहण होकर विभिन्न लाभ देते हैं। कोयला या कंडा की यह मध्यम आँच की अग्नि होती है। इसमें अग्नि के ज्वालाओं जितना उच्च तापमान नहीं होता है कि आहुति किए गए पदार्थों का दहन हो सके। यह मात्र गर्म होकर वाष्प बनकर हवा में फैलते हैं। अतः लिखा हुआ तथ्य विज्ञान एवं प्रत्यक्ष प्रमाण से भी सत्यापित होता है।

4, पृष्ठ 181, समुल्लास 8 में– "उत्तर–जो स्वभाव से जगत् की उत्पत्ति–(करीब 10 लाइन के बाद) ।जैसे हल्दी, चूना और नींबू का रस दूर–दूर देश से आकर आप नहीं मिलते, किसी के मिलाने से मिलते हैं, उसमें भी यथायोग्य मिलाने से रोरी बनती है, अधिक न्यून वा अन्यथा करने से रोरी नहीं होती है।

विज्ञान के तथ्य हम सभी विज्ञान एवं प्रत्यक्ष प्रमाण में जानते हैं कि एक निर्धारित तापमान के दूध में थोड़ा दही मिलाने से कुछ घंटों में ही पूरा दूध दही बन जाता है। ऐसे ही राख पर नींबू या तेज़ाब डालने से खूब गैस के बुलबुले उठते हैं। यह सब इन पदार्थों में रसायनिक क्रियाएँ होने से होती हैं। ऐसे ही हल्दी, चूना और नींबू रस को निर्धारित मात्राओं में मिलाने से रोरी बनती है।

5, पृष्ठ 181, समुल्लास 8 में–"उत्तर–बिना कर्त्ता के कोई भी क्रिया या क्रियाजन्य पदार्थ नहीं बन सकता। (करीब 2 लाइन के बाद)...। जो तुम इसको न मानों तो कठिन से कठिन पाषाण, हीरा और फौलाद आदि तोड़ कर टुकड़े कर, गला वा भस्म कर देखो कि इनमें परमाणु पृथक–पृथक मिले हैं या नहीं।''

विज्ञान के तथ्य –सभी विज्ञानी जानते हैं कि गति के तीन नियम हैं। संक्षिप्त में पहला नियम कि कोई पदार्थ बगैर बल लगाये, अपने आप गतिमान नहीं हो सकता है। अतः बगैर कर्ता के कार्य के कोई कार्य नहीं हो सकता है। दूसरा नियम कि किसी वस्तु पर जिस दिशा में जितना ज्यादा बल लगाया जायेगा तो उस वस्तु में उसी दिशा में उतना ही ज्यादा गति होगा। तीसरा नियम कि प्रत्येक क्रिया ही सदैव बराबर विपरीत दिशा में प्रतिक्रिया होती है जिसका उदाहरण है कि जब हम मेज़ पर जितने बल से मुक्का मारते हैं तब मेज़ की सतह द्वारा हमारे हाथ पर उतना ही बल प्रतिक्रिया में लगा देता है जिससे ही हमें चोट लगती है। हम विज्ञान से जानते हैं कि किसी भी तत्त्वों का सूक्ष्मतम कण परमाणु होता है। किसी भी पदार्थ का सूक्ष्मतम कण अणु होता है जिसमें एक से अधिक तत्त्वों के परमाणु होते हैं जो परस्पर आर्कषण बल से आपस में जुड़े–होते हैं। जिसे बल आदि प्रयोग करने पर अलग–अलग किए जा सकते हैं।

6, पृष्ठ 190, समुल्लास 8 में–"उत्तर– ये दोनों आधे झूठे हैं। क्योंकि वेद में लिखा है कि –**आयं गौः ... प्रयन्त्स्वः।।** यजुः.1 अ.3/म.6 ।।

अर्थात यह भूगोल जल के सहित सूर्य के चारों ओर आकाश में घूमती जाती है, अर्थात् सूर्य के चारों ओर भूमि घूमा करती है – (करीब 4 लाइन के बाद) ... और सब मूर्तिमान द्रव्यों को दिखाता हुआ, सब लोकों से साथ आकर्षण गुण से सह वर्तमान, अपनी परिधी में घूमता रहता है,... (करीब 3 लाइन के बाद)... जैसे यह चंद्र लोक सूर्य से प्रकाशित होता है, वैसे ही पृथिव्यादि लोक भी सूर्य के प्रकाश ही से प्रकाशित होते हैं। परंतु रात और दिन सर्वदा वर्तमान रहते हैं, क्योंकि पृथिव्यादि लोक घूम कर जितना भाग सूर्य के सामने आता जाता है, उतने में दिन और जितना पृष्ठ में अर्थात् आड़ में होता जाता है, उतने में रात।''

विज्ञान के तथ्य–विज्ञान एवं भूगोल शास्त्र के ज्ञान के अनुसार से हम जानते हैं कि पृथ्वी थल एवं जल के साथ सूर्य के चारों ओर घूमती रहती है। हम यह भी जानते है कि पृथ्वी, सूर्य, चन्द्रमा आदि सभी ग्रह परस्पर आपसी आकर्षण यानी गुरुत्वाकर्षण बल से अपनी–अपनी धूरी पर अपने–अपने निर्धारित परिधि पर निरंतर अनवरत चलायमान यानी घूमते रहते हैं। सूर्य से ही पृथ्वी, चंद्रमा आदि प्रकाशित होते है। अतः ऋषि द्वारा लिखे गये तथ्य पूर्णतः विज्ञान सम्मत हैं।

ई. 5 चन्द्रा अपार्टमेंट,
115 कबीर मार्ग (निकट योजना भवन)
लखनऊ, उत्तर प्रदेश –226001
मो. 9451734531,
Email- vedpragupta@gmail.com

'शुभ विवाह' पर सभी को बधाई

● भद्रसेन

'भारत का प्राचीन परम्परा के अनुसार वर–वधू, दुल्हा–दुल्हन जब परिणय प्रक्रिया को अपनाते हैं तो वे पति–पत्नी बनते हैं। पति–पत्नी शब्दों का अर्थ और अभिप्राय यही है, कि एक दूसरे के जीवन साथी, परस्पर आपूरक–सहायक, एक दूसरे को संभालते वाले अतः पति को जो अर्थ है, वहीं पत्नी का भी है क्योंकि दोनों शब्द रूप ही धातु से बनते हैं। शुभ विवाह पर बधाई देने वालों तथा प्रिय पाठको! आइए अपनी परम्परा में अनुरूप विवाह में विधि विधान का नया भाव है? पाणिग्रहण क्या उद्‌देश्य और प्रयोजन है तथा इस परिणय प्रक्रिया की प्रणाली क्या हैं? इन सब को समझने, विचारने का कुछ प्रयास करें।

विवाह– हमारी भारतीय परम्परा, इतिहास, धर्म, साहित्य में विवाह का बहुत बड़ा महत्व है। इसीलिए हम सब बाजे–गाजे और खुशियों, उमंगों के साथ इस समारोह को रचाते तथा मनाते हैं। क्योंकि जब एक शिशु समय के साथ बढ़ता है, इससे जहां धीरे–धीरे उस के शरीर में परिवर्तन आता है, वहां केवल सामाजिक संपर्क, संस्कार, शिक्षा के कारण ही नहीं, अपितु उम्र के साथ स्वाभाविक रूप में उस के विचारों, भावनाओं में भी परिवर्तन आता हैं। हर युवा लड़के–लड़की की शारीरिक स्थिति और मानसिक भावनाओं में बदलाव आता है और तब उन्हें हर बात एवं चीज़ बदली–बदली नए रूप में दीखती है। इसीलिए युवावस्था में हर लड़के–लड़की में जीवन साथी प्राप्त करने की स्वाभाविक इच्छा होती है। इसी की मर्यादित प्रक्रिया का नाम ही विवाह हैं। यह एक सामाजिक और धार्मिक सम्बन्ध के साथ उन दोनों की इच्छापूर्ति का एक सुसभ्य और उत्तरदायित्व पूर्ण साधन भी है। इन तीनों भावनाओं का निर्वाह किस प्रकार से हो, इसी बात को समझाने के लिए हमारे पूर्वजों ने विवाह की एक व्यवस्थित पद्धति बनाई है। जिसके माध्यम से विवाहितों को संदेश दिया जाता है, कि सांझे जीवन की सांझी भावनाओं और सामाजिक–धार्मिक भावों की पूर्ति के साज (विवाह) को कैसे सुन्दर ढंग से बजाया जाए और यह दो जीवनों के साथ दो परिवारों के मेल का संगीत कैसे मनमोहक हो? इसीलिए ही विवाह संस्कार की विविध प्रक्रियाओं में विवाहित जीवन के व्यवहारों का निर्देश मिलता है।

पारिवारिक सम्बन्ध– इस अवसर पर सबसे पहले यह बात सामने आती है, कि हमारे पारिवारिक सम्बन्धों का मूल आधार पति–पत्नी का सम्बन्ध है। जब दो इस सम्बन्ध को निभाते हैं, तो अन्य पारिवारिक सम्बन्ध सामने आते हैं। इन सम्बन्धों की परम्परा के अनुसार ही पति–पत्नी की सत्ता और सम्बन्ध है, यह कोई स्वतन्त्र स्थिति नहीं है। यह तो पारिवारिक परम्परा वाली जंजीर की दो ऐसी कड़ियां हैं, जिनके साथ अन्य कड़ियां जुड़ी हुई हैं। जिनका दूसरी कड़ियों पर और अपने नए परिवार की परम्परा पर भी सीधा प्रभाव होता है।

पति–पत्नी एक दूसरे के सहयोगी तथा पूरक हैं, तभी तो इनको जीवनसाथी, अर्धांग–अर्धांगिणी, सखा कहा जाता है। दोनों के अपनेपन, पारस्परिक सद्भाव, सहयोग, विश्वास से ही परिवार पल्लवित, पुष्पित एवं फलित होता है। पति–पत्नीपन का निर्धारण और प्रारम्भ विवाह दूसरा होता है।

परिणय–प्रक्रिया– विवाह विधि के अवसर पर भावी विवाहित जीवन का अभिनय अभिनीत किसा जाता है। तभी तो इस अवसर पर सर्वप्रथम स्वागत विधि में आदर, आसन, पाद्य–अर्घ्य–आचमनीय–जल, मधुपर्क, वस्त्र–आदान–प्रदान–धारण आदि की पद्धति प्रचलित है। जैसे कि इस शुभ अवसर पर अच्छी प्रकार से स्नान के पश्चात् स्वच्छ–सुन्दर वस्त्रों और आभूषणों को धारण करने का रिवाज़ है। ऐसा करने से स्वच्छता, प्रसन्नता, आकर्षकता, रमणीयता आती हैं, जो कि शारीरिक स्वास्थ्य और लम्बी उम्र ।अमें बहुत ही सहायक होती है। इसके साथ स्वच्छता, सुन्दर वस्त्र, आभूषण आदि का धारण देखने वालों को भी प्रसन्नता प्रदान करता है। यह प्रसन्नता एक दूसरे के लिए तड़प, शुचिता, सजगता, निश्चिन्तता का पथ प्रशस्त करती है, क्योंकि स्वच्छ–सुन्दर वस्त्र–आभूषण धारण करने से परस्पर अधिक अच्छे लगते हैं। अच्छे लगने का दाम्पत्य जीवन में एक विशेष स्थान है। अतएव पाणिग्रहण संस्कार में **'संप्रियौ रोचिष्णू'**= दोनों ही प्रसन्नतापूर्वक विवाह करें (संप्रियौ) अच्छे प्रकार, एक दूसरे से प्रसन्न (रोचिष्णू) एक दूसरे में रुचिमुक्त– महर्षि दयानन्द) शब्दों में पारस्परिक आकर्षण, प्रियता की ओर विशेष ध्यान जहां आकर्षित किया गया है, वहां मनुस्मृति (3,56,62) में बहुत ही स्पष्ट शब्दों में कहा है–

यदि पत्नी सुन्दर वस्त्र, आभुषणों से अपने आप को आकर्षक नहीं बनाती, फुहड़ बनी रहती है, तो वह अपने पति की प्रसन्नता को नहीं बढ़ाती और इस में बिना संभोग सामर्थ्य भी पूर्ण समृद्ध नहीं होता (61)। पत्नी के सुघड़ होने से ही सारा घर और परिवार सुरूचिपूर्ण होता है। (62) अतः कल्याण की कामना और समृद्धि की अभिलाषा रखने वाले सभी परिवारिक जनों को आभूषण, वस्त्र, भोज्य पदार्थो से नारियों का सदा सत्कार करना चाहिए (59,55) जिन घरों में इन चीज़ों से नारियों का मान–सम्मान होता है, वे ही परिवार हर तरह से फूलते–फलते हैं (56) और जहाँ नारियां इन चीजो से तंग होकर दुखी होती हैं, वे परिवार नष्ट हो जाते है (57–8।)

अतः जिस परिवार में पत्नी की सुघड़ता, पाककला की प्रवीणता और घर की सुरूचिपूर्ण व्यवस्था से पति और पति से वस्त्र, आभुषण, भोजन, स्नेह आदि की प्राप्ति पर पत्नी सन्तुष्ट, विश्वस्त, सम्मानित होती है। वे ही परिवार समृद्ध तथा सुखी होते हैं और इसी में दोनो की भलाई है (60)।

विवाह के विधि–विधान में सब से पहले परिवार और वधू द्वारा वर और बरातियों का स्वागत होता है क्योंकि जब अपनों का आदर हैं, तो परस्पर स्वतः अपनापन आता है।

तभी तो इस प्रक्रिया में सब से पहले स्वागत विधि में वधू और उस के माता–पिता अपने आमन्त्रित वर को आदर के साथ आसनादि देकर बैठाते हैं। तब वधु सत्कारार्थ स्नेहपूर्वक पाघ, अर्ध्य तथा पीने के लिए आचमनीय रूप में जल देने के पश्चात् मधुपर्क देते है।

मधुपर्क में शहद–दही और घी होता है, जिस का भाव है, कि हमारे भोजन में शहद जैसे रोगनिवारक और दही जैसे पाचक एवं पुष्टिकारक पदार्थ होने चाहिए। इस के साथ मधुपर्क की एक यह भी भावना है कि विवाहितों के जीवन में परस्पर शहद जैसी मधुरता, प्रेम और दही जैसी सफेदी, पवित्रता, निछलता विश्वास होना चाहिए। पति–पत्नि की कहानी से।

सामाजिक जीवन– मनुष्य एक परस्पर अपेक्षी सामाजिक प्राणी है और सामाजिकता मनुष्य का एक स्वाभाविक गुण है। अतः वह समाज में आशा, उत्साह एवं सुख अनुभव करता है। सामाजिक और वैयक्तिक जीवन को सुखी बनाने के लिए पारस्परिक सहयोग तथा भाव की आवश्यकता होती है। तभी तो शतपथ (1, 5,2,1) में कहा है कि जहां परस्पर एक दूसरे को समझते हुए सब वर्तते हैं, वहां ही सब कार्य ठीक होते हैं। इसीलिए गीता (3,11) में कहा है–परस्परं भावयन्तः श्रेयः परम वात्त्स्यथ। प्रत्येक कार्य में एक दूसरे को विश्वास में लेते हुए, सहयोग का आदर करते हुए, एक दूसरे को विश्वास में लेते हुए, सहयोग देने से ही सफल, सुख प्राप्त होता है।

समाज को प्रथम ईकाई परिवार है। जिस का शुभारम्भ एक युवक और युवती द्वारा धार्मिक–सामाजिक मर्यादा पूर्वक जीवन भर साथ रहने की घोषणा से होता है। सामाजिकता और जीवन की विविध इच्छाओं की स्वाभाविकता के कारण विवाह–जीवन का एक अनिवार्य पहलु है। इसी लिए मनुष्यस्मृति (3,177) में इस की प्राण वायु से उपमा दी है। भारतीय साहित्य में स्वर्ग की प्राप्ति के लिए अनेक विधि तप, यज्ञ, पूजा–पाठ, तीर्थ, व्रत आदि साधनो की विस्तृत चर्चा आती है। अथर्व वेद (12, 3, 17) में गृहस्थ को नाक – सुखधाम, स्वर्ग कहा है। अतः गृहस्थ जीवन एक सरल, सुविधा पूर्ण स्वाभाविक स्वर्ग है।

विवाह साझे जीवन के विकास की एक सुव्यवस्थित साधना है। अन्य साझेदारियों की सभी शर्तो की तरह वैवाहिक जीवन की भावनाओं को दर्शाते हुए विवाह विधि के प्रतिज्ञा मन्त्रों द्वारा भरी सभा में यज्ञवेदी पर वधू के हाथ को ग्रहण करते हुए वह कहता हैं– गृम्णामि ते सौभमत्मय हस्तम्। कृम् 1,385,36 अर्थात् में अपने और तेरे सौभाग्य, विवाह, प्रगति, सुचा–समृद्धि के लिए पाणिग्रहण के रूप में तेरे हाथ (साथ) को स्वीकार करता हू। इसीलिए ही कहा गया है कि विवाह एक साझे जीवन की साधना है। **यतो हि –**

दाम्पत्य जीवन पति–पत्नी के व्यक्तित्व के विकास को पूर्णता देता है। जब हम किसी दूसरे के साथ प्रेम से, सहिष्णुता से, घुल मिलकर रहना सीखते हैं तो हमारा व्यक्तित्व विकसित होता है। इस विकास के लिए विवाह सर्वोत्तम अवसर होता है। यदि विवाह असफल होता है तो इस लिए नहीं कि विवाह में कोई दोष है अपितु इसलिए कि दोनों में से एक या दोनों के व्यक्तित्त्व के विकास में कमी रह गई है विवाह की असफलता किसी बड़े कारण से नहीं अपितु छोटी–छोटी बातों को लेकर ही होती है। प्रसन्न स्वभाव, सुन्दर व्यवहार आकर्षक–शालीन वार्तालाप विनोद प्रियता, सुन्दरता, रूचि साम्य खिलाड़ी भावना, पारस्पारिक लगाव, समझ और आकर्षण विवाह की सफलता के मूलसूत्र है।

सांझे जीवन में परस्पारिक सहयोग, सद्भाव का आधार है–स्नेह। परस्पर स्नेह का आदान प्रदान तभी होता है। जब एक दूसरे पर विश्वास होता है। विश्वास के अभाव में स्नेह के सूत्र टूटने शुरू हो जाते है। जब भी विश्वास में सन्देह उभरने लगता है, तभी स्नेह सहयोग स्वतः समाप्त हो जाते है और परस्पर विश्वास तभी जमता है, जब एक दूसरे से कोई बात छिपा कर नहीं रखता और हर बात परस्पर की सलाह से की जाती है। जैमिनि के 'जिन्दगी' चलचित्र में जैसे उस रात की एक बात छिपा लेने से धीरे–धीरे बीच में सन्देह की दीवार खड़ी हो गई और दाम्पत्य जीवन बिखर कर रह

गया। ऐसे ही आज भी प्रतिदिन के जीवन में परस्पर लुकाव–छिपाव से सन्देह उत्पन्न होकर विश्वास छिन्न–भिन्न हो रहा है। जिसके परिणाम स्वरूप सुख के आधार पर परिवार बिखर रहें है या भार मालूम हो रहें है। तभी तो वेद ने विवाह के प्रतिज्ञा मंत्रो में प्रेरणा दी है कि **'न स्तेयमघिम मनसोद मुच्ये'** अथर्व 14, 1, 57 अर्थात् दम्पती केन केवल खान–पान में ही परस्पर चोरी, छिपाव न हो, अपितु हर व्यवहार में परस्पर लुकाव नहीं होना चाहिए। अन्यथा इस का परिणाम बिखराव के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं हो सकता। क्योंकि प्रथम बड़ी उड़ीकों, चाहनाओं और धूम–धाम के साथ वैवाहिक जीवन को सब चाहते और अपनाते है। पर जल्दी ही एक दूसरे को विश्वास में न लेने, परस्पर एक दूसरे को न समझने तथा सहयोग, सद्भाव के अभाव एवं छोटी–छोटी बातों का धन के लोभ के कारण कुछ इस सुखधाम को नरकागार बना लेते है और तब दाम्पत्य जीवन बिखर कर रह जाता है।

विवाहित जीवन की सफलता के मूलमन्त्र को दर्शाते हुए ही कहा है –

मम व्रते हृदयं दधामि मम मनु चित्तं ते अस्तु।
मम वाचमेक मना जुषस्व – पारस्कर गृह्यसूत्र 1,8,8

इस मंत्र को विवाह में दोनों क्रमशः एक दूसरे के हृदय को छूते हुए बोलते हैं कि हम एक दूसरे से अपनी भावनाओं को मिलाते हैं। हमारा चित्त एक दूसरे के विचारों के अनुकूल हो। इस के लिए हम परस्पर एक दूसरे की बातों को बड़े ध्यान से सुनेंगे 1 क्योकि आज से पूर्व न जाने कितने दिनों तक कितनी बार इस सांझे जीवन के बारे में हर एक ने अपने–अपने सपने संजोये होते हैं। न जाने कैसे–कैसे भावी जीवन के सम्बन्ध में बाग बनाए होते हैं। युवावस्था में प्रत्येक के दिल में इस सम्बन्ध में कुछ न कुछ कल्पनायें होती हैं। अत एव मन्त्र में एक दूसरे के हृदय के भावों को ध्यान में रखने और विचारों से विचार मिलाने की प्रेरणा दी है। इस के लिए जहाँ एक दूसरे की बात को ध्यान से सुनना जरूरी है, वहां परस्पर का विश्वास इस का मूल आधार है।

इसीलिए ही मनुस्मृतिकार ने कहा है–

अन्योऽन्यस्यव्यक्तिचारो भवेदामरणान्तिकः।
एष धर्मेः समासेन ज्ञेयस्तु स्त्रीपुंसयोः परः
(119, 101)

सारांश – दाम्पत्य जीवन में भी भगवद् भक्ति की तरह समर्पण, आत्मार्पण की भावना ही मूलभूत आधार है। योग दर्शन में अतएव ईश्वर प्रणिधान की तीन वार चर्चा आई है। जिस का भाव है, अपने आप को पूर्णतः इश्वर के अर्पण कर देना अर्थात् सौंपना जैसे एक शिशु निश्छलता के साथ अपने आप को माता–पिता तथा गुरू के अर्पण कर देता है, स्वार्थ उन का आज्ञानुवर्त होता है। तब माता–पिता गुरु आदि उस के समर्पण के अनुरूप प्रसन्न हो कर हर प्रकार से उस की प्रगति का पूर्ण प्रयास करते हैं। वैसे ही जो पति–पत्नि सर्वथा निश्छलता से परस्पर पूर्णतः अपना–आपा सौंप देते हैं, वे परस्पर जैसा विश्वास, सन्तोष, अपनापन और प्रसन्नता अनुभव करते हैं, उन की संसार में कोई तुलना नहीं है। इसी भावना को सामने रखकर ही एक कवि ने कहा है–

इक जान होके चलते हैं, मैं तू को छोड़ कर।
उलझत की तंग राह में, दुई की गुजर नहीं।।

तभी तो महर्षि दयानन्द ने अपने अमरग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है–जब विवाह होवे तब स्त्री के साथ पुरूष के साथ स्त्री बिक चुकी अर्थात् जो स्त्री और पुरुष के साथ हाव, भाव नख शिखाग्र पर्यन्त जो कुछ है, वह एक दूसरे के अधीन हो जाता है। सम्मुलास–4, और ऐसे पति–पत्नी ही सच्चे अर्थो में जीवन साथी सिद्ध होते हैं। क्योंकि आपस के इस सांझे जीवन में हर तरह के साथ में ही दोनों की सफलता और प्रसन्नता है। तभी तो विवाह विधि में वर–वधू अपने दोनों परिवारों, सम्बन्धियों, मित्रों को आश्वस्त करते हुए कहते हैं– **ओम् समञ्जन्तु विश्वे देवाः समापो हृदयानि नौ।**

ऋग् 10, 85, 47 हे उपस्थितो। हम आपको विश्वास दिलाते हैं कि जैसे दो जल मिलकर एकरूप हो जाते हैं। ऐसे ही हम दोनों के हृदय, भाव विचार और भावी जीवन एकरस समरथ, अपनत्व से भरपूर होगा।

आत्मार्पण की भावन प्रभु भक्ति और विवाहित जीवन में एक जैसी होने के कारण निम्न गीत की प्रारम्भिक पंक्तियां दोनों पर एक समान लागु होती हैं।

अब सौंप दिया इस जीवन का, सब भार तुम्हारें हाथों में। है जीत तुम्हारें हाथों में है हार, तुम्हारे हाथों में।। मेरा निश्चय है एक यही, इक बार तुम्हें पा जाऊँ मैं। अर्पण कर दूं जगती भरका, सब प्यार तुम्हारें हाथों में।।

हां, इस विवाह के शुभ अवसर पर बधाई और सफलता की शुभकामनाओं के साथ इस चर्चा को यहीं पूर्ण करते हुए परमपिता परमेश्वर से प्रार्थना करते हैं, कि–

हों युगल के दिल तथा संकल्प अविरोधी सदा।
मन भरे हों प्रेम से, जिससे बढ़े सुख–सम्पदा।।

182, शालीमार नगर
होशियारपुर, पंजाब

भारतीय संविधान का निर्माण तथा विशेषताएँ

● शिवनारायण उपाध्याय

नाभारतीय संविधान एक लिखित संविधान है। साथ ही हमारा संविधान अनम्य तथा नम्य का मिश्रण है। संविधान के कतिपय उपबन्धों यथा अनुच्छेद 2, 3 तथा 4 और 169 का संशोधन संसद के दोनों सदनों में साधारण बहुमत द्वारा किया जा सकता है।

अन्य उपबन्धों का संशोधन अनुच्छेद 368 के अधीन संसद के दोनों सदनों द्वारा प्रत्येक सदन में उपस्थित तथा मतदान करने वाले सदस्यों के 2/3 विशेष बहुमत और कुल सदस्यों के बहुमत द्वारा किया जा सकता है। कुछ उपबन्धों के मामले में संशोधन के लिए संसद के दोनों सदनों के विशेष बहुमत के अतिरिक्त आधे से अन्यून राज्यों के अनुसमर्थन की आवश्यकता होती है।

भारत एक गणराज्य है।उसका अध्यक्ष राष्ट्रपति होता है। उसी में सभी कार्यपालक शक्तियाँ निहित होती है तथा उसी के नाम से इनका प्रयोग किया जाता है। वह सशस्त्र बलों का सर्वोच्च कमांडर भी होता है। परन्तु वास्तव में हमारा राष्ट्रपति केवल नाम मात्र का संवैधानिक अध्यक्ष होता है। वह मंत्री परिषद की सहायता तथा उसके परामर्श से ही कार्य करता है। मंत्री परिषद सामूहिक रूप से संसद के प्रति उत्तरदारी होती है।

संसदीय प्रभुत्व बनाम न्यायिक सर्वोच्चता हमारे संविधान में संसद तथा उच्चतम न्यायालय दोनों अपने–अपने क्षेत्र में सर्वोच्च हैं। उच्चतम न्यायालय संसद द्वारा पारित किसी कानून को संविधान का उल्लंघन करने वाला बताकर संसद के अधिकार के बाहर अवैध और अमान्य घोषित कर सकता है। संसद कतिपय प्रतिबन्धों के अधीन रहते हुए संविधान के अधिकांश भागों में संशोधन कर सकती है।

वयस्क मताधिकार–प्रत्येक वयस्क भारतीय को बिना किसी भेद भाव के मतदान के समान अधिकार प्राप्त हैं। मूल अधिकारों का घोषणा पत्र–संविधान के भाग 111 में जो मूल अधिकार सम्मिलित किए गए हैं वे राज्य के विरुद्ध व्यक्ति के ऐसे अधिकार हैं जिसका अतिक्रमण नहीं हो सकता है। उदाहरण के लिए किसी व्यक्ति को उसकी स्वतंत्रता से वंचित करने वाले कानून को उच्चतम न्यायालय में चुनौती दी जा सकती है और यदि ये कानून अथवा कार्यपालक कार्य संविधान में बताए गए किन्हीं प्रतिबन्धों के अन्तर्गत न आते हों तो उन्हें असवैधानिक तथा अमान्य ठहराया जा सकता है।

नीति निर्देशक तत्त्व–नीति निर्देशक तत्त्व हमारे संविधान की अनूठी विशेषता है। लोगों के अधिकांश सामाजिक, आर्थिक अधिकार इसमें सम्मिलित किए गए हैं। यद्यपि इन्हें न्यायालय में लागू नहीं किया जा सकता है फिर भी इन तत्त्वों से देश के लिए मार्ग दर्शन प्राप्त होता है। ये वे आदर्श हैं जिन्हें प्राप्त करने के लिए राज्य को कार्य करना चाहिए।

नागरिकता–भारत में संघीय संरचना होने पर भी केवल इकहरी नागरिकता का उपबन्ध रखा गया है। केवल कश्मीर जन जातीय क्षेत्रों को कुछ विशेष संरक्षण दिया गया है।

मूल कर्त्तव्य–संविधान के 42वें संशोधन के द्वारा मूल कर्त्तव्य शीर्षक के अन्तर्गत संविधान में एक नया भाग जोड़ा गया है। इसमें भारत के सभी नागरिकों के लिए दस कर्त्तव्यों की एक संहिता निर्धारित की गई है।

स्वतंत्र न्याय पालिका–भारत के संविधान में एक स्वतंत्र न्याय पालिका की व्यवस्था की गई है। उच्च न्यायालय और उच्चतम न्यायालय एक ही एकीकृत न्यायिक संरचना के अंग हैं। उनका अधिकार क्षेत्र सभी विधियों यानी संघ, राज्य, सिविल, दंडिक या संवैधानिक विधियों पर होता है। उच्चतम न्यायालय का निर्णय देश की सर्वोपरि विधि होता है। उच्चतम न्यायालय राज्यों के बीच अथवा संघ और राज्यों के बीच अधिकार क्षेत्र तथा शक्तियों के वितरण के सम्बन्ध में उत्पन्न विवादों के विवाचक का कार्य भी करता है।

निष्कर्ष–भारत का संविधान सर्वाधिक व्यापक दस्तावेज है। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद अनेक देशों के संविधान लुढ़क गए तथा लुप्त हो गए परन्तु हमारे संविधान ने अनेक संकटों का सफलतापूर्वक सामना किया है और वह जीवित रहा है। इतिशम्

73 शास्त्री नगर दादाबाड़ी,
कोटा (राज.)

ब्रह्मज्ञान की आवश्यकता

● आचार्य भगवान देव वेदालंकार

प्रिय बन्धुओं! शान्ति प्राप्त करने के लिए, सच्चा सुख यदि हम चाहते हैं, यदि हम चाहते हैं कि हमें परमानन्द की प्राप्ति हो, उसके लिए ब्रह्म ज्ञान की आवश्यकता है, आज हम संसार के अन्य पदार्थों के विषय में तो बहुत जानते हैं–जैसे मकान के विषय में, दुकान के विषय में, कारोबार–व्यापार के विषय में, पहनने और खाने के विषय में हमारा बहुत–सारा ज्ञान है, लेकिन आत्मा–परमात्मा के विषय में हमारा ज्ञान ना के बराबर है। हम आज आध्यात्म–ज्ञान में बहुत पिछड़ चुके हैं। इसीलिए आजकल के लोगों में भयंकर अशान्ति है। इसलिए आजकल के लोगों में भयंकर अशान्ति है। बेचैनी का वातावरण है। परस्पर में ईर्ष्या–द्वेष है। तेज़ी से रोग और बीमारियाँ बढ़ रही हैं। परिवारों में संगठन–शक्ति घट रही है। एकता अब कहाँ दिखलाई देती है? हमारे परिवारों में नरक जैसा दुःख–बेचैनी, अशान्ति का साम्राज्य घर कर चुका हैं। अतः प्रिय बन्धुओ! यदि सुख चाहते हैं, शान्ति चाहते हैं, तो निश्चय ही हमें सांसारिक कर्त्तव्य–कर्मों को करते हुए, 'ब्रह्म' का ज्ञान, मनन–चिन्तन और ध्यान करना होगा क्योंकि 'ब्रह्म' परमेश्वर शान्ति स्वरूप है। सुख का भण्डार है। आनन्द का सरोवर है। उसका ध्यान करने से अशान्ति दूर हो जाती है। शान्ति आ जाती है। व्यक्ति का जीवन आनन्दमय होता है। आत्मिक उन्नति होती है।

खुशियों से उसकी झोली भर जाती है।

यजुर्वेद के अध्याय 25, मन्त्र 13 में स्पष्ट संकेत है–

"यस्य छायाऽमृतं यस्य मृत्युः" अर्थात् उस 'ब्रह्म' का आश्रय ही अमृत अर्थात् मोक्ष सुखदायक है। जिसका न मानना अर्थात् न करना ही मृत्यु आदि दुःख का हेतु है। आधुनिक युग के महान्–योगी महर्षि दयानन्द सरस्वती की भी यही मान्यता है। "जैसे शीत से, भयंकर सर्दी से परेशान पुरुष का अग्नि के पास जाते से सर्दी दूर हो जाता है वैसे परमेश्वर के पास (समीप) आने से, सब दोष, दुःख, अशान्ति छूटकर, परमेश्वर के गुण, कर्म–स्वभाव के सदृश जीवात्मा के गुण–कर्म–स्वभाव पवित्र हो जाते हैं। इसलिए परमेश्वर की स्तुति, प्रार्थना अवश्य करनी चाहिए। इससे इसका फल पृथक होगा, परन्तु आत्मा का बल इतना बढ़ेगा कि वह पर्वत के समान दुःख प्राप्त होने पर भी न घबरायेगा और सब दुःखों को सहन कर सकेगा। क्या यह छोटी बात है?"

–सत्यार्थप्रकाश सप्तम समुल्लास

मन्त्र का भाव स्पष्ट करते हुए किसी कवि ने लिखा है–

तू ही आत्मज्ञान बल दाता, सुयश विज्ञ जन गाते हैं।
तेरी चरण–शरण में आकर, भवसागर तर जाते हैं।
तूझको ही जपना जीवन है, मरण तुझे विसराने में।
मेरी सारी शक्ति लगे, प्रभु तुझसे लगन लगाने में।।

वेदान्त दर्शन–शास्त्र में ऋषि ने सर्वप्रथम ब्रह्म की चर्चा से ही अपने ग्रन्थ का मंगलाचरण किया है–

"अथातो ब्रह्म–जिज्ञासा" अर्थात् मनुष्य को अपने जीवन में ब्रह्म को जानने अर्थात् ब्रह्म को समझने की उत्सुकता सर्वप्रथम होनी चाहिए।

"ब्रह्मापरं युज्यतां ब्रह्म पूर्वं।
ब्रह्मास्ततो मध्यतो ब्रह्म सर्वतः" अथर्व वेद 8.2.25

अर्थात् जहाँ जिसने जीवन की परिधि 'ब्रह्म' को बना लिया है अथवा ब्रह्म ऊपर है, ब्रहम नीचे है, आगे है, पीछे है, मध्य में है, सब ओर है। जहाँ यह अनुभव होने लगता है, उन घरों में रहने वाले प्रभु और मनुष्य किसी को भी मृत्यु अथवा कष्ट नहीं सताते।

महर्षि कपिल मुनि अपने प्रसिद्ध ग्रंथ साँख्य दर्शन में तीन प्रकार के दुःखों की चर्चा करते हैं–

"अथ त्रिविध दुःख तदत्यन्त निवृत्ति अत्यन्त पुरुषार्थः" अर्थात् संसार में तीन प्रकार के दुःख हैं–(1) **आधि भौतिक दुःख**– ये दुःख सांसारिक पदार्थों से प्राप्त होते हैं, जैसे अधिक भोजन खाने से, हिंसक पशु–पक्षियों से, जहरीले जन्तुओं के काटने से, आपस के लड़ाई–झगड़ों से, अनेक विध अशान्ति और जो दुःख प्राप्त होते हैं, आधि भौतिक दुःख कहलाते हैं।

(2) **आध्यात्मिक दुःख**– संसार में कुछ दुःख ऐसे हैं जो आन्तरिक कमजोरी के कारण प्राप्त होते हैं–जैसे–अधिक काम से, अधिक क्रोध से, अधिक लोभ से, ईर्ष्या से, अधिक मोह से प्राप्त होते हैं। आध्यात्मिक दुःख कहलाते हैं।

(3) तीसरे प्रकार का **दुःख आधिदैविक** होता है। यह दुःख प्रकृति की ओर से, दैवी प्रकोप के फलस्वरूप प्राप्त होता है। जैसे– भूकम्पों के माध्यम से, अति वर्षा से, अनावृष्टि (वर्षा न होने से) से इत्यादि प्रकार से जो दुःख प्राप्त होते हैं। आधिदैविक दुःख कहलाते हैं।

इन सभी प्रकार के दुःखों को अत्यन्त पुरुषार्थ के साथ, उस परम ब्रह्म परमेश्वर की भक्ति से, प्रार्थना से तथा उपासना से दूर किया जा सकता है। यह संसार एक विकट रसोई घर है जिसमें दुःखों के अंगारे भरे पड़े हैं। सांसारिक प्राणी विषय रूपी अमृत को चाहता है, लेकिन यथार्थ में ये विषय अमृत नहीं हो सकते हैं, इन विषयों में अमृत जैसी शीतल वस्तु की प्राप्ति कहाँ? यहाँ तो दुःख के अंगारे धधक रहे हैं, इनकी शान्ति के लिए हमें ब्रह्मानन्द रूपी जल में डुबकी लगानी होगी। तब यह विषयों की आग वैसे ही शान्त हो जायेगी, जैसे जल से आग शान्त हो जाती है।

यजुर्वेद अध्याय 30, मंत्र 18 में स्पष्ट संकेत दिया गया है कि उस ब्रह्म को जान लेने से, व्यक्ति अशान्ति, कष्टों, दुःखों और मृत्यु तक के कष्टों से पार हो जाता है। वेद में ऐसे संकेत हैं–

"वेदाहमेतं पुरुषं महान्तमादित्य वर्णं तमसः परस्तात्।
तमेव विदित्वाऽति मृत्युमेति नान्यः पन्थाविद्यते अयनाय।। –यजुर्वेद अ. 30–18

अर्थात्– (**तमसः परस्तात्**) अज्ञान, अविद्या, अन्धकार से परे (**आदित्य वर्णम्**) प्रकाश रूप, आदित्य वर्ण (**महान्तम् पुरुषम्**) सर्वशक्तिमान् उस महान् परमेश्वर को (अहम्–एतम वेद) मैंने जान लिया है। उसको जानकर मैं कृतार्थ हो गया हूँ। (**तमेव विदित्वाऽति मृत्युमेति**) उस परम ब्रह्म परमेश्वर को जानकर, व्यक्ति मृत्यु रूपी कष्टों को पार कर लेता है। जन्म–मरण के बन्धनों से छूट सकता है। ईश्वर–भक्त से कष्ट दूर चले जाते हैं। अशान्ति को दूर करने का एक यही रास्ता है। (**नान्यः पन्था–अयनाय विद्यते**) दुःखों से पार होने का अन्य दूसरा कोई उपाय नहीं है। ब्रह्म–ज्ञान ही प्रमुख साधन है।

ब्रह्म का स्वरूप– ईश्वर एक ही है। लेकिन ईश्वर के नाम असंख्य हैं। महर्षि स्वामी दयानन्द जी के ईश्वर के सौ नामों का, सत्यार्थ प्रकाश ग्रन्थ के प्रमुख समुल्लास में ही उल्लेख करते हुए कहा है कि ईश्वर के ये नाम समुद्र में बिन्दु के समान हैं। ईश्वर के गुण–कर्म–स्वभाव के आधार पर, उसके नाम प्रचलित हैं। ईश्वर के उन्हीं नामों में से ईश्वर का 'ब्रह्म' नाम है। जो महानता का प्रतीक है। ईश्वर अन्य जीवों की अपेक्षा सबसे 'महान्' है। बढ़ा हुआ है। सृष्टि की रचना करना, उसकी स्थिति, रक्षा करना और अन्य में प्रलय करना "परम ब्रह्म परमेश्वर" की ही महानता को प्रकट करता है। इसी प्रकार स्वामी दयानन्द जी के आर्यसमाज के दूसरे नियम में ब्रह्म स्वरूप ईश्वर के अन्य नामों को इस प्रकार किया है–

"ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्त्ता है।" उसी की उपासना करनी योग्य है।

ब्रह्म निर्गुण भी है और सगुण भी है–

महर्षि स्वामी दयानन्द जी ने ईश्वर को 'निर्गुण ब्रह्म' कहा है। ईश्वर निराकार है। निर्गुण अर्थात् ईश्वर में जन्म धारण करने का गुण नहीं है। सत्त्व, रज और तम गुण नहीं है। रूप, रस, स्पर्श, गन्ध आदि जड़ पदार्थों के गुण नहीं हैं। अविद्या, अल्पज्ञता, राग, द्वेष, क्लेश, दुःख–मृत्यु आदि गुण न होने से ब्रह्म निर्गुण है। **"यो गुणेभ्यो निर्गतः स निर्गुण ईश्वरः" सगुणः कस्मात्? "यो गुणैः सह वर्तते स सगुणः"** अर्थात् परमात्मा में अनन्त गुण–सामर्थ्य होने से ब्रह्म–सगुण है। जैसे सर्व सुख–दाता, पवित्रता, अनन्तबल युक्त गुणों से युक्त है। परमेश्वर सर्वज्ञ, चेतन, आनन्दस्वरूप आदि गुण होने से सगुण हैं। अर्थात् ईश्वर के समान संसार के पदार्थों में भी निर्गुणता और सगुणता के लक्षण पाये हैं।

इसलिए जिन्होंने प्रभु को, ज्ञानपूर्वक, बुद्धिपूर्वक, पूर्ण समझदारी के साथ अपनाया है, वे तो तर जाते हैं। इस संसार रूपी भवसागर से पार हो जाते हैं और जो जन, उस ब्रह्म को नासमझी से, वेद–विरुद्ध, विचार–धारा से, अवैदिक ढंग से अपनाते हैं वे आचार्य शंकर के कथनानुसार–

"पुनरपि जननं पुनरपि मरणं, पुनरपि जननि जठरे श्यनम्" इस संसार में दुःखों के सागर में अविद्या, अज्ञानता के अन्धकार में डूब जाते हैं। वे बार–बार जन्म लेते हैं, बार–बार मरते हैं और बार–बार गर्भ की यातनायें सहते हैं। जैसे आकाश का शरीर पर लपेटना असम्भव है, उसी प्रकार ब्रह्मज्ञान के बिना सुख–प्राप्ति असम्भव है।

ईश्वर क्या करता है?

'ईश्वर' ब्रह्म बनकर, महान् बनकर, सर्वशक्तिमान् बनकर, जीवों को शुभ–अशुभ, अच्छे और बुरे कर्मों का फल देने वाला है। वह कर्मफल दाता है।

"अवश्यमेव भोगतव्यं कृतं कर्म शुभमशुभम्" ईश्वर न्यायकारी बनकर मनुष्यों के किये गये शुभ और अशुभ कर्मों का फल अवश्य देता है। पण्डित बस्ती राम ने लिखा है–

"धन्य–धन्य हो तेरी कारीगरी करतार।
वह यथा योग्य बर्ताव करे,
मिले रूओ रियायत कहीं नहीं।
दिन–रात न्याय में फर्क पड़े ना,
तेरी लगी कचहरी कहीं नहीं।
जब ऋषि–मुनि और सन्त महन्त थके,
गा–गा पाया पार नहीं।
जो करनी चाहे कर गुज़रे,
किसी काम में तू लाचार नहीं।
जो करदे सो नहीं बदल सके,

☞ पृष्ठ 08 का शेष

आस्तिकवाद

● डॉ. जन्लवत कुमार शास्त्री

नास्तिक–जब परमात्मा अनादि, अनन्त, नित्य और शाश्वत हैं, वह सच्चिदानन्दस्वरूप और ज्ञानस्वरूप है, तब आनन्द को छोड़कर जगत् निर्माण के प्रपञ्च और दुःख में क्यों पड़ा? जबकि सामान्य मनुष्य भी सुख को छोड़कर दुःख उठाना नहीं चाहता।

आस्तिक–परमात्मा कभी आनन्द को छोड़कर किसी दुःख या प्रपंच में नहीं पड़ता। जगत् निर्माण का कार्य उसके लिए दुःख या प्रपंच का कार्य नहीं है। वह **'क्लेशकर्मविपाकाशय'** से सर्वथा अपरामृष्ट है। प्रपञ्च और दुःख में वह गिरता है जो एकदेशी होने से आनन्द और सुख को छोड़कर दुःख प्रपञ्चादि में पड़ जाता है, परमात्मा सर्वदेशी होने से उसका आनन्द का छोड़ना सम्भव नहीं। सर्वज्ञानमय चिदानन्द परमात्मा ही जगत् के निर्माण में सक्षम है। उसके बिना कोई जीव (मुक्तादि भी) जगत् का निर्माण नहीं कर सकता–अल्पसामर्थ्यवान् होने से। जड़ जगत् में स्वयं बनने का सामर्थ्य नहीं है अतः परमात्मा ही जगत् को बनाता है तथा सदा आनन्द में रहता है। परमात्मा जगत् का निर्माण उपादानभूत प्रकृति के परमाणुओं से करता है। सृष्टि निर्माण में परमात्मा निमित्त कारण हैं। उसी प्रकार घटादि के निर्माण में कुम्भकार मिट्टी आदि उपादान भूत सामग्री से ही रचना करने में समर्थ होता है, घटादि के निर्माण में जीव निमित्त कारण है। अतः माता–पिता रूप निमित्त कारण से उत्पत्ति के प्रबन्ध का नियम परमात्मा ने ही बनाया है।

नास्तिक–ईश्वर मुक्तिरूप सुख को छोड़कर जगत् के सर्जन, धारण, पालन और संहाररूपी बखेड़े में क्यों पड़ता है?

आस्तिक–ईश्वर सदैव मुक्त स्वभाव होने से मुक्तिरूप सुख को नहीं छोड़ता। मुक्ति को छोड़कर बन्ध में पड़ना जीवों का काम है, परमेश्वर का नहीं। मुक्ति को छोड़कर बन्धन को प्राप्त होना तथा बन्ध को छोड़कर मुक्ति को प्राप्त करना जीव का कार्य है। मुक्ति और बन्ध सापेक्षता से होते हैं। अर्थात् मुक्ति की अपेक्षा से बन्ध, और बन्ध की अपेक्षा से मुक्ति होती है। अतः जो कभी बद्ध नहीं था उसे मुक्त क्योंकर कहा जा सकता है? अनन्त सर्वदेशी सर्वव्यापक ईश्वर बन्धन या नैमित्तिक (निमित्त से प्राप्त होनेवाली) मुक्ति के चक्र में तीर्थंकरों के समान कभी नहीं पड़ता। वह परमात्मा सदैव मुक्त कहाता है। वह परमात्मा आपके (जैनी) द्वारा माने जानेवाले तीर्थंकरों के समान नहीं है, जो 'एक देश में रहनेवाला, बन्धपूर्वक मुक्ति से युक्त, तथा साधनों से सिद्ध मुक्ति को प्राप्त करके तथाकथित परमात्मा' कहा जाता है अनन्तगुण–कर्म–स्वभाव युक्त परमात्मा से निर्मित यह जगत् उसके समक्ष किञ्चन्मात्र है अर्थात्–यह सम्पूर्ण जगत् परमात्मा के एक देश में ही वर्तमान है, जैसा कि यजुर्वेद में कहा गया है–**'पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि'** (31।2)। वह अनन्त अखण्डैकरस ब्रह्म इस जगत् को बनाता, धारण करता तथा प्रलय करता हुआ भी कभी बन्ध में नहीं पड़ता।

नास्तिक–जैसे भाँग पीने से मनुष्य को स्वयमेव नशा चढ़ जाता है वैसे ही जीव को अपने कर्मों का फल स्वयमेव मिल जाएगा, फल प्रदाता के रूप में ईश्वर को मानने की आवश्यकता नहीं है।

आस्तिक–यह पूर्व में कहा जा चुका है कि कोई भी जीव अपने दुष्ट कर्मों का फल भोगना नहीं चाहता इसलिए अवश्यमेव परमात्मा को न्यायाधीश के रूप में होना चाहिए। जिस प्रकार चोर, डाकू, लम्पट आदि दुष्ट मनुष्य स्वयं कारागार में नहीं जाते या स्वयं फाँसी पर नहीं चढ़ते उनको कारागार, फाँसी आदि का दण्ड राजा प्रदान करता है, इसी प्रकार जीवों के कर्त्तव्याकर्त्तव्य के सम्बन्ध में परमात्मा को समझना चाहिए।

जहाँ तक भाँग पीकर स्वयमेव नशा चढ़ने का प्रश्न है, यह उदाहरण सटीक नहीं हैं क्योंकि मद्यपान के अभ्यासी को न्यूनमात्रा में नशा चढ़ता है तथा अनभ्यासी को बहुत अधिक मद चढ़ता है, क्या इसी प्रकार बहुत अधिक पाप–पुण्य करनेवाले को न्यून फल मिलना तथा थोड़ा–थोड़ा पाप–पुण्य करनेवाले को अधिक फल मिलना सम्भव हो सकता है? तब तो छोटे अर्थात् न्यून कर्मवालों को अधिक फल मिलने लगेगा? अतः यह उदाहरण व्यभिचरित है।

नास्तिक–हमारे (जैनियों के) मत में तो अनेक ईश्वर हैं एक ईश्वर नहीं हैं। जितने भी मुक्त जीव हैं, वे सभी ईश्वर हैं।

आस्तिक–आपका यह कथन ठीक नहीं है कि बहुत ईश्वर हैं, जबकि अनेक जीवों के होने से उनमें लड़ाई–झगड़े होते हैं वैसे उन ईश्वरों में भी लड़ना–भिड़ना होता होगा। चौबीस तीर्थंकरों को मुक्त मानकर उन्हें ईश्वर समझना भ्रम है, क्योंकि वे पहले बद्ध थे, पश्चात् मुक्त हुए, पुनः बन्ध में अवश्य पड़ेंगे, क्योंकि स्वाभाविक रूप से सदैव मुक्त नहीं हैं। क्योंकि अल्पज्ञ जीव को मुक्ति दशा में सर्वज्ञ सर्वसामर्थवान् ईश्वर मानना मिथ्या है, यतः अल्प शक्ति और अल्पज्ञ जीव मुक्ति दशा में सर्वज्ञ तथा असीम सामर्थ्यवाला नहीं हो सकता। उसका सामर्थ्य सर्वदा ससीम ही रहेगा।

नास्तिक–यह जगत् स्वयंसिद्ध है, इसका कोई कर्त्ता नहीं। कर्त्ता के रूप में ईश्वर को मानना मूढता है।

आस्तिक–इस संसार में बिना कर्त्ता का कोई कर्म, कर्म के बिना कोई कार्य होता हुआ नहीं दिखता है, अतः ईश्वर के बिना यह विविध जगत् और इस संसार में नाना प्रकार का रचना वैशिष्ट्य या कौशल सम्भव नहीं है। ईश्वर कर्त्ता है, जगत् कार्य तथा रचनाविशेष व कौशल ही ईश्वर का कर्म है। गेहूँ से आटा या रोटी का निर्माण या उदरपूर्ति का होना जब स्वयंसिद्ध नहीं है तब इस समग्र सृष्टि का निर्माण स्वयंसिद्ध कैसे हो सकता है?

जगत् में जितने पदार्थ उत्पन्न होते हैं वे सब संयोगज उत्पत्ति विनाशवाले देखे जाते हैं। फिर यह जगत् भी उत्पन्न और विनाशवाला क्यों नहीं? यह स्वयंसिद्ध कैसे हो सकता है? जो संयोग से उत्पन्न होता है, वह अनादि और अनन्त कभी नहीं हो सकता। अतः इस सृष्टि का भी निर्माण हुआ है और इसका प्रलय भी होगा। इस वर्तमान अवस्था में जगत् सर्वदा नहीं रहेगा और न था।

नास्तिक–ईश्वर विरक्त या मोहित है? यदि विरक्त है तो जगत् के प्रपञ्च में क्यों पड़ा? यदि मोहित है तो जगत् के बनाने में समर्थ नहीं हो सकता।

आस्तिक–वैराग्य या मोह सर्वव्यापक परमात्मा में उत्पन्न (घटित) नहीं हो सकता। सर्वव्यापक पदार्थ किसको छोड़ या किसको ग्रहण कर सकता है? ईश्वर से उत्कृष्ट कोई पदार्थ नहीं है और न उससे कोई अप्राप्य ही है, अतः उसका किसी में मोह भी नहीं होता। वैराग्य या मोह का होना जीव में घटित होता है, ईश्वर में नहीं।

नास्तिक–ईश्वर को जगत् का कर्त्ता तथा जीवों के कर्मों का फलदाता मानने पर ईश्वर जगत् में लिप्त हो जाएगा। जगत् में लिप्त ईश्वर को प्रपञ्ची तथा दुःखी भी मानना होगा।

आस्तिक–जब संसार में धार्मिक न्यायाधीश विद्वान् व्यक्ति फल पानेवाले, दण्डप्राप्तकर्त्ता व्यक्तियों तथा उसके कर्मों में लिप्त नहीं होता, तब अनन्त, शुद्ध, बुद्ध, सदामुक्त, सर्वशुचि परमब्रह्म इस जगत् में भला क्योंकर लिप्त हो सकेगा? ईश्वर न्यायाधीश के समान निर्लिप्त रहता है। अतः वह कभी भी प्रपञ्ची होकर दुःखी नहीं हो सकता।

सूर्यो यथा सर्वलोकस्य चक्षुः न लिप्यते चाक्षुषैर्बाह्यदोषैः।

एको वशी सर्वभूतान्तरात्मा न दुष्यते लोकदुःखेन बाह्यः।।

अर्थ–जिस प्रकार सभी लोकों का चक्षुस्वरूप (प्रकाशक) सूर्य चाक्षुष तथा बाह्यादि पदार्थ के दोषों से दूषित नहीं होता, उसी प्रकार सर्वभूतों में व्यापक सबको वश में करनेवाला एकमेव परमात्मा बाह्य लौकिक दुःख और दोषों से दूषित नहीं होता है।

विशेष–नास्तिकों के अनेक मत–मतान्तर हैं। यह अध्याय नास्तिक जैनियों के मत के खण्डन में लिखा गया है। सत्यार्थप्रकाश के द्वादश समुल्लास में 'नास्तिक–आस्तिक संवाद' जैनियों के मत पर आधारित हैं अर्थात् नास्तिकों के कथन जैनियों के मत हैं, यह समझना चाहिए। इसमें चारवाक मत के भी कुछ तर्कों का समावेश हो जाता है।

अग्निज्योति चाणक्यपुरी
अमेठी, उ.प्र.–227405
मो. 09415185521

☞ *पृष्ठ 07 का शेष*

ब्रह्मज्ञान की आवश्यकता

किसी और का लेता सहारा नहीं।
सुखस्वरूप दरस दे अपना,
खोल के अखण्डों द्वार।।

संसार में सहारे तो अनेक हैं जैसे– माता का, पिता का, भाइयों का, रिश्तेदार–सम्बन्धियों का सहारा। लेकिन कठोपनिषद् का ऋषि कहता है कि–

एतदालम्बनं श्रेष्ठमेतदालम्बनम् परम्।
एतदालम्बनं ज्ञात्वा ब्रह्मलोहे महीयते।।
कठोपनिषद् 2/17

अर्थात् उस परम ब्रह्म परमेश्वर का ज्ञान सर्वश्रेष्ठ है। उसका सहारा ही सर्वोत्तम है। उस सहारे को जानकर ही मनुष्य ब्रह्मलोक की महिमा को प्राप्त होता है।

94–विकास नगर –फेस–III (हस्तसाल एरिया)
निकट बालाजी मंदिर, नई दिल्ली–59
मो. 9250906201

श्रीमद् भगवद्गीता एक मूल्यांकन

स्वामी नित्यानन्द सरस्वती

वैष्णव भक्त कहते हैं कि वेदों से गीता श्रेष्ठ है, परंतु स्वयं शंकर और कृष्ण भी वेद को श्रेष्ठ समझते हैं। अब गीता और वेद में विरोध हो तो गीता का प्रमाण असत्य, और वेद का सत्य ही मानना पड़ेगा। गीता में सब मंतव्य हैं। रामानुज, वैष्णव, शैव्य, द्वैत, अद्वैत, भक्ति, ज्ञान सब का उसमें थोडा–थोडा प्रतिपादन है। गीता एक खिचड़ी है। एक समय एक गवैया मूसल कपड़े में लपेट एक राजा के पास आया। और कपड़े में छिपाया हुआ मूसल दिखाकर कहने लगा कि यह संयुक्त बाजा है। यह अन्यान्य प्रकार के बाजों के साथ ही बजता है। राजा ने गवैयों को बुलाया, तब यह नया गवैया भी मूसल को अंगुलियां लगाकर बजाता हो ऐसा स्वांग करने लगा। राजा ने कहा – अब उसको बजाने दो। तब गवैया ने कहा कि यह तो संयुक्त बाजा है, अकेला नहीं बजेगा। यह साथ ही बजता है। चाहे आप बजा देखें। इसी तरह से गीता का भी है। गीता का प्रमाण स्वयं कुछ प्रतिपादन नहीं करता, परंतु दूसरे के साथ जैसा चाहो वैसा बजा लो। मैं इसमें गीता का कोई दोष है ऐसा नहीं कहता, परंतु वह स्वतः प्रमाण नहीं मानी जाती। ''यदा यदा हि धर्मस्य'' इत्यादि जो श्लोक हैं, वह (नवीन) वेदांत दृष्टि से ठीक है। (नवीन) वेदाँत के अनुसार सब पदार्थ ब्रह्म है। तो पीछे कृष्ण ने क्या पाप किया कि वह ब्रह्म नहीं ? इस श्लोक का ऐसा अर्थ होता है कि कृष्ण मुक्तात्मा योगी होने से अपनी इच्छा के अनुसार जन्म पाने को कहते हैं। मुक्तात्मा योगी ईश्वर की ओर से ईश्वर की तरह ही उपदेश कर सकते हैं, ऐसा भी कह सकते हैं, परंतु कृष्ण स्वयं अपने आपको ईश्वर कहें, ऐसे अज्ञानी हों यह असंभव है।

(संदर्भ ग्रंथः ''वैदिक सिद्धांत व्याख्यान माला'', व्याख्यानकर्ताः श्री ब्र. स्वामी नित्यानन्द जी महाराज, द्वितीय संस्करण 1961, पृष्ठ 131–132, प्रकाशकः गोविन्दराम हासानन्द, दिल्ली)

प्रस्तुति – भावेश मेरजा 8–17 टाउनशिप, पो. नर्मदानगर, जि. भरूच, गुजरात – 392015, मो. 9879528247

☞ *पृष्ठ 02 का शेष*

प्रभु दर्शन

फिर उठे और अपने लक्ष्य की ओर चल पड़े। दृढ़ संकल्प कर ले कि चाहे कुछ भी हो, मैं तो अपने लक्ष्य, प्रभु–दर्शन की ओर अग्रसर होता ही रहूँगा। संकल्प और दृढ़–संकल्प तथा शिव–सुन्दर संकल्पवाला बनकर ही मनुष्य अपनी जीवन–यात्रा का उद्देश्य पूर्ण कर सकता है। जब लौकिक व्यवहार में संकल्पों का इतना प्रभाव होता है, तो अनुमान कीजिए कि दृढ़–संकल्प कितने अद्भुत व अलौकिक फल पैदा कर सकते हैं।

प्रभु–दर्शन के लिए अब अपने मन में उत्कट इच्छा उत्पन्न हो जाय, तो फिर संसार में रहते हुए भी ये सारे संसारी आडम्बर और आकर्षण फीके दीखने लगते है और एक प्यारा प्रभु ही प्यारा प्रतीत होने लगता है। तब भक्त उपनिषद् के शब्दों में पुकार उठता है–

तदेतत् प्रेयः पुत्रात्, प्रेयो वित्तात् प्रेयोऽन्यस्मात्।
सर्वस्मादन्तरतरं यदयमात्मा।।

बृह. उ. 1/ 4/ 9/ 8//

"यह पुत्र से अधिक प्यारा है, यह धन से अधिक प्यारा है और हरेक वस्तु से अधिक प्यारा है, यह सबसे अधिक निकट है जो यह आत्मा है।"

यह तो अभी आत्मा के प्यार की बात कही और परमात्मा तो इससे कहीं महान् और अधिक प्यारा है। वेद भगवान् की वाणी में अटल विश्वासी भक्त कह उठता है–

उत ब्रुवन्तु नो निदो निरन्यतश्चिदारत।
दधाना इन्द्र इद् दुवः।।
उत नः सुभगां अरिर्वोचेयुर्दस्म कृष्टयः।
स्यामेदिन्द्रस्य शर्मणि।।

ऋ. 1/4/ 5–6//

"चाहे हमारे निन्दक हमें कहें कि तुम जो केवल इन्द्र परमात्मा की ही पूजा करते हो, तुम इस स्थान से और दूसरे स्थान से भी चले जाओ।। 5 ।। और चाहे भक्तजन हमें सौभाग्यवाला बतलायें, पर हे अद्भुत इन्द्र प्रभो! हम तेरी ही शरण में पड़े रहेंगे।। 6 ।। दृढ़ संकल्पवाला बनने के लिए पूर्ण आस्तिकता की भावना मन में जाग्रत् करनी चाहिए। श्रद्धा और विश्वास की जोत हृदय में प्रज्ज्वलित करनी चाहिए। कितनी ही घटनाएँ ऐसी भी आयेंगी जो श्रद्धा, विश्वास और आस्तिकता को कुचल डालें, परन्तु सावधान रहें और ऐसी घटनाओं के पश्चात् भी दृढ़ संकल्प को न छोड़ें। दृढ़ संकल्पवालों ने अन्त में सफलता प्राप्त की है। प्रह्लाद पर क्या कम आपत्तियाँ आई थीं? परन्तु उसने अपना सत्य संकल्प न छोड़ा और प्रभु–दर्शन पा लिये। ध्रुव के दृढ़ संकल्प ने ही उसे घोर तप करने पर प्रेरित किया; उसने संकल्प किया–"चाहे जो हो जाये, अपने प्यारे प्रभु सच्चे पिता की गोद में बैठूँगा।" और वह प्रभु की गोद में जा बैठा। यह दृढ़ संकल्प ही था, जिसने महर्षि दयानन्द को माता–पिता के लाड़–प्यार तथा घर के सुख–आनन्द को त्यागने पर तैयार कर दिया। बाल्यकाल से ही दयानन्द सच्चे शिव के दर्शन पाने के लिए व्याकुल हो उठे। नर्मदा नदी के तट पर निवास करनेवाले योगियों और उत्तराखंड, गंगोत्री (**गंगोत्री उत्तर काशी से 56 मील है। गंगोत्री जब 13 मील की दूरी पर रह जाती है तो इस मार्ग की अन्तिम बस्ती घराली आती है। घराली से एक मील ऊपर गंगा–तट से कुछ ऊँचाई पर दक्षिण हाथ कुछ कन्दराएँ हैं। उनमें एक कन्दरा घराली के ठाकुर नारायणसिंह जी ने दिखलाई और बतलाया कि उनके पिता ठाकुर शिवसिंह कई बार यहाँ आकर बतलाया करते थे कि श्री स्वामी दयानन्द जी सरस्वती यहाँ चिरकाल तक तपस्या करते रहे थे, अपने तपस्या–काल में स्वामी जी लम्बी समाधियाँ भी यहाँ पर लगाया करते थे। जब वे समाधि–अवस्था में नहीं होते थे, तो मेरे पिता प्रतिदिन स्वामी जी के लिए खाद्य पदार्थ लाया करते थे। (सं. 1941)**), जमुनोत्री, बदरी और केदारनाथ की गुफाओं में रहनेवाले तपस्वियों के पास दयानन्द पहुँचे और जब तक अनन्त शिव के दर्शन नहीं पा लिये, उन्हें चैन नहीं आया। वह दृढ़ संकल्प ही है, जो साधक और भक्त को भयंकर परिस्थितियों में भी अटल खड़ा रखता है। प्रेम, श्रद्धा और भक्ति की मूर्ति मीराबाई को उसके दृढ़ संकल्प ने ही लोकलाज से ऊपर कर दिया; विषैले सर्प तथा हलाहल से अभय बना दिया।

रियासत बहावलपुर के रामभक्त छिनकू की घटना आपने सुनी होगी। बहुत ही मीठे स्वभाववाला भक्त छिनकू बहावलपुर नगर में एक छोटी–सी दुकान करता था। नवाब तक को यह विश्वास था कि सर्वथा शुद्ध और बिना मिलावट के यदि कहीं से घी मिल सकता है तो वह भक्त छिनकू की दुकान से। भक्त छिनकू दिनभर भगवान् राम की आराधना में लगा रहता। शाम को दो–तीन घण्टों के लिए दुकान खोलकर रोटी कमा लेता। कितने ही मुसलमान भी उसके मित्र थे। एक दिन एक मुसलमान ने उसे प्रातः ही आकर कहा, "दुकान खोलो।" भक्त ने कहा, "यह समय दुकान खोलने का नहीं, राम–भजन का है।" मुसलमान ने भगवान् राम को गाली निकाल दी। भक्त छिनकू ने कहा, "यदि ऐसे ही तुम्हारे खुदा को और पीर को कोई कह दे तो?" इस पर क्रोध भड़का, उसने और भी गालियाँ निकाली। तब भक्त छिनकू ने भी वैसा ही उत्तर दिया। बात बढ़ गई। मुसलमान ने हाकिम के पास रिपोर्ट कर दी। भक्त छिनकू को पुलिस पकड़कर ले गई। नवाब तक समाचार जा पहुँचा। नवाब ने छिनकू को कहला भेजा कि तू इन्कारी हो जा और कह दे कि मैंने पीर को गालियाँ नहीं दी, तुम्हें छोड़ दिया जायेगा। परन्तु जब कचहरी में उसका बयान लिया गया तो भक्त छिनकू ने स्पष्ट कह दिया कि 'मैंने गाली दी है।' फैसला सुना दिया गया कि इसे 'संगसार' (पत्थर मार–मारकर मार देना) कर दिया जाये। भक्त छिनकू मैदान में खड़ा है। जो भी उधर से गुज़रता है, वह भक्त पर पत्थर ज़ोर से फेंकता है। पत्थर की चोट लगते ही भक्त छिनकू फिर पुकारता है–'राम!' पत्थरों से सिर, छाती, सारा शरीर घायल कर दिया गया। जगह–जगह से लहु बह रहा है और हर पत्थर लगने पर छिनकू कह रहा है–'राम!' शाम के समय उसका एक परम मित्र मुसलमान सज्जन आया और कहने लगा, "छिनकू! मुझसे तुम्हारी यह दशा देखी नहीं जाती। मुझे आज्ञा दो कि मैं तुम्हें तलवार से एक बार में समाप्त कर दूँ।" भक्त ने उत्तर दिया, "नहीं प्यारे मित्र! राज्याज्ञा के अनुसार ही मुझे मरना चाहिए। मुझे तो कोई पीड़ा हो ही नहीं रही। पीड़ा केवल शरीर को है, जिसे आज भी और कल भी नाश होना है। तुम कोई चिन्ता न करो।" परन्तु उस मुसलमान मित्र के लिए यह अत्याचार अधिक देर सहन करना कठिन हो गया। तब वह तलवार ले आया उसने भक्त छिनकू का सिर काट दिया। सिर कटकर भूमि पर गिरा तो कितनी ही देर तक छटपटाता रहा और ऐसा प्रतीत होता था कि वह मानो उसी राम–राम कहने के पुराने आवेश में ऐसा कर रहा हो। दृढ़ संकल्प और अगाध शक्ति ही ऐसे दृश्य दिखला सकती है।

हैदराबाद (दक्षिण) के एक वीर युवक को जब हैदराबाद जेल में 'वैदिक धर्म की जय' का नारा लगाने से पुलिस ने रोका और वह वीर युवक 'वैदिक धर्म की जय' बार–बार कहता ही रहा, तो उसे टिक–टिकी के साथ बाँध दिया गया। कोड़े पड़ने लगे। जब पहला कोड़ा पड़ा, तो वीर ने ऊँचे स्वर से कहा 'वैदिक धर्म की जय!' दूसरा कोड़ा और भी अधिक तेज़ था। वीर की ध्वनि अधिक ऊँची हो गई। हर कोड़े के पश्चात् 'वैदिक धर्म की जय' की गूँज सारी जेल से सुनाई देती थी। कोड़ों से जब वीर बेहोश हो गया तो उस अवस्था में भी उसकी जिह्वा 'वैदिक धर्म की जय' का ही जाप कर रही थी। दृढ़ संकल्प और श्रद्धा के सामने संसारी पीड़ाएँ कोई शक्ति नहीं रखती। जो एक कार्य करने या किसी उद्देश्य को पूर्ण करने का दृढ़ निश्चय कर चुका है और उस पर कटिबद्ध हो गया है, उसको न अग्नि, न समुद्र, न भूकम्प, न नाना कष्ट, कोई भी रोक नहीं सकता। वह तो सबको पार करता हुआ आगे निकल जाता है–

मार सहे अन्धेर की, झटके कष्ट अनेक।
धर्मवीर की अन्त में, पर न टरेगी टेक।।

इसी प्रकार जब प्रभु–प्रेम का पात्र बनने के लिए दृढ़ संकल्प कर इसी मार्ग पर हम चल पड़ेंगे, तब समझ लीजिये कि प्रभु–दर्शन की पक्की नींव पर आप अचल खड़े हो गए हैं। आप निःसन्देह साक्षात् दर्शन पा लेंगे और कोई बाधा आपके मार्ग में खड़ी नहीं होगी। यदि बाधाएँ आयेंगी तो आप उनपर विजय प्राप्त कर लेंगे। निश्चय रखें, आपमें बहुत बड़ी शक्ति छिपी हुई है। आप स्वयं ही अपने–आपको पूर्ण अधिकारी बनाने के योग्य हैं। अपने संकल्प को निर्बल न होने दें। अपने–आपको तुच्छ न समझें। भगवान् कृष्ण के इस आदेश को सर्वदा सामने रखें कि –

उद्धरेदात्मनात्मानं नात्मानमवसादयेत्।
आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः।।

गीता 6/ 5//

"अपने द्वारा ही अपना उद्धार करो, अपने को गिराओ नहीं। आप स्वयं ही अपने मित्र हैं और आप ही अपने वैरी हैं।" **क्रमशः**

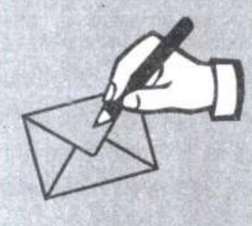

पत्र/कविता

हिंदू मंदिर का मुस्लिम पुजारी

कर्नाटक से चमत्कारी खबर आई है। एक हिंदू मंदिर में एक मुसलमान पुजारी को नियुक्त किया गया है। यह मठ लिंगायत संप्रदाय का है। कर्नाटक में दलितों के बाद लिंगायतों की संख्या सबसे ज्यादा है। कर्नाटक के कई बडे नेता जैसे बी.डी. जत्ती, निजलिंगप्पा, बोम्मई, येदियुरप्पा आदि लिंगायत ही हैं। इस संप्रदाय की स्थापना लगभग आठ सौ साल पहले बीजापुर के बसवन्ना ने की थी। वे स्वयं जन्म से ब्राह्मण थे लेकिन उन्होंने जातिवाद पर कडा प्रहार किया। उनके सिद्धांत ऐसे है कि कोई भी जाति, कोई भी मजहब कोई भी वंश, कोई भी देश का आदमी उन्हें मान सकता है। जैसे भगवान बस एक ही है। दो–चार नहीं। वही इस सृष्टी का जन्मदाता, रक्षक और विसर्जक है। कोई भी मनुष्य भगवान नहीं कहला सकता। ईश्वर निराकार है। जरूरतमंद मनुष्यकृत हैं। अहंकार, वासना, क्रोध को त्यागो। हिंसा मत करो। जो भी इश्वर को मानते हैं वे सब एक हैं। यही लिंगायत धर्म है। लिंगायतों के इन सिद्धांतो और इस्लाम की मूल मान्यताओं में कितनी समानता है। सिर्फ एक असमानता मुझे दिखाई पड़ी। लिंगायत लोग मांस नहीं खाते। मैं अपने मुसलमान दोस्तों से पूछता हूं कि कुरान शरीफ में कही क्या यह लिखा है कि जो मांस नहीं खाएगा, वह आदमी घटिया मुसलमान माना जायेगा। इसीलिए जब असुति गांव के 33 वर्षीय मुसलमान युवक शरीफ रहमानसाब मुल्ला ने लिंगायत मंदिर का मुख्य पुजारी बनना स्वीकार किया तो मुझे घोर आश्चर्य हुआ लेकिन मैंने इस क्रांतिकारी घटना पर विशेष ध्यान दिया। शरीफ के पिता रहमानसाब मुल्ला ने इस मठ के निर्माण के लिए अपनी दो एकड़ जमीन भी दान दी है। शरीफ बचपन से ही बसवन्ना के बचनों का पाठ करते रहे हैं और अब उन्होंने लिंगायतों के सारे विधि–विधान को सीख लिया है। भारत के गांवो में अभी भी दलितों और मुसलमानों का छुआ हुआ पानी भी नहीं पिया जाता लेकिन मठाधीश शरीफ मुल्ला सबके लिए आदरणीय बन गए हैं। दीक्षा लेते समय उनके फोटो में उनका मुंडा हुआ सिर, मस्तक पर तिलक और अर्धनग्न शरीर पर धोती देखकर विश्वास ही नहीं होता कि ये शरिफ मुल्ला हैं।

डॉ वेदप्रताप वैदिक

****

मिलकर होली पर्व मनाओ

विश्व के सब नर–नारी, मिलकर होली पर्व मनाओ।
प्यार प्रेम का रंग बरसाओ, पावन वैदिक धर्म निभाओ।।

फाल्गुन मास पूर्णिमा के दिन, यह त्यौहार मनाते हैं सब।
हलवा, पूरी, खीर, पकौड़े, बडे चाव से खाते हैं सब।।
नीला, पीला, हरा, गुलाबी, लाल रंग बर्साते हैं सब।
ईश्वर–भक्त, सदाचारी, सत्कर्मी मौज उड़ाते हैं सब।।

नशेबाज़ हैं जो नर–नारी, उनके सब दुर्व्यसन छुड़ाओ।
प्यार–प्रेम का रंग बरसाओ, पावन वैदिक धर्म निभाओ।।

याद रखो अय दुनियां वालो, नव संस्येष्टि यज्ञ है होली।
आर्य पर्व है, वेद पढ़ो तुम, करो न गन्दी कमी ठिठोली।।
बातों में मिश्री सी घोलो, सबसे बोलो मीठी बोली।
दान करो, दानी बन जाओ, युवक–युवतियों की सब टोली।।

दुखियो दीन अनाथ जनों को, खुश होकर के गले लगाओ।
प्यार–प्रेम का रंग बरसाओ, पावन वैदिक धर्म निभाओ।।

चोरी करना, जुआ खेलना, बुरे काम माने जाते हैं।
मांसाहारी, दुष्ट शराबी, कहीं नहीं आदर पाते हैं।।
धर्म, द्रोही, धूर्त, नास्तिक, नफरत से देखे जाते हैं।
चरित्रहीन, व्यभिचारी गुण्डे, मार सदा जग में खाते हैं।

जो वैदिक पथ भूल गए हैं, उनको वैदिक मार्ग बताओ।
प्यार–प्रेम का रंग बरसाओ, पावन वैदिक धर्म निभाओ।।

जगत्पिता जगदीश्वर का, अहसान भूलाना महापाप है।
अच्छी संगति तज, गंदी संगत, अपनाना महापाप है।।
ईश्वर भक्तों, विद्वानों की, हंसी उड़ाना महापाप है।
पर धन, पर नारी पर सुनलो, कुदृष्टि लगाना महापाप है।

योगी संत तपस्वी हैं जो, उनको खुश हो, शीष नवाओ।
प्यार–प्रेम का रंग वर्षाओ, पावन वैदिक धर्म निभाओ।।

अण्डे, मछली, मुर्गा, तीतर, बकरा खाना महापाप है।
मानवता के हत्यारों का, साथ निभाना महापाप है।।
श्री कृष्ण जैसे योगी को, दोष लगाना महापाप है।
गोपी बल्लभ, राधा प्रेमी, चोर बताना महापाप है।।

भेदी पाखंडी, गुण्डों की, पोल खोल दो आगे आओ।
प्यार–प्रेम का रंग बरसाओ, पावन वैदिक धर्म निभाओ।।

परोपकारी बनो साथियो! मानव हो मानवता धारो।
निद्रा त्यागो, होश संभालो, राम, कृष्ण के पुत्र दुलारो।।
आए हो किस लिए जगत् में, बैठ तनिक एकांत विचारो।
अगर मारना तुमको तो, बुरी भावनाओं को मारो।।

'नंदलाल निर्भय' दुनियां में, अपना नाम अमर कर जाओ।
प्यार–प्रेम का रंग बरसाओ, पावन वैदिक धर्म निभाओ।।

पं. नंदलाल निर्भय सिद्धान्ताचार्य, जनपद पलवल, हरियाणा
चलभाष 9913845774

पूनम की पाठशाला

कहीं विद्या की पाठशाला, कहीं कला की पाठशाला।
लेकिन सबसे उत्तम, आर्य रत्न पूनम की पाठशाला।।

मिलते हैं उच्च संस्कार यहाँ, दूर होता है अज्ञान यहाँ।
यह मानवता की कार्यशाला है, यह ओजस्वी पूनम की पाठशाला है।।

जीने की कला यहाँ मिलती है, मंद मंद मुस्कान यहाँ मिलती है।
यह मानव–धर्म की धर्मशाला है, यह प्रख्यात शिक्षा शास्त्री पूनम की पाठशाला है।।

यहाँ ओ३म् की सरिता बहती है, यहाँ ओ३म् ध्वजा फहराती है।
यह सतत मनन की पाठशाला है, यह परम् तपी पूनम की पाठशाला है।।

ऋषिवर का मिलता संदेश यहाँ, तप और तपस्या का मिलता संदेश यहाँ।
यह सत्य पथ की पाठशाला है, यह वातावरण रक्षक पूनम की पाठशाला है।।

भाई चारे की मिलती सीख यहाँ, परोपकार की बहती धार यहाँ।
यह दिव्य अनुपम पाठशाला है, यह पूनम की पाठशाला है।।

वेदों का मिलता ज्ञान यहाँ, आर्य समाज का बढ़ता उत्थान यहाँ।
यह एकता–अखंडता की पाठशाला है, यह महामानव पूनम की पाठशाला है।।

आत्मविश्वास को मिलता बल यहाँ, अंधविश्वास होता नाश यहाँ।
यह भरत–भारती पाठशाला है, यह महात्मा पूनम की पाठशाला है।।

मानवीय मूल्यों का होता सृजन यहाँ, नैतिकता का है स्थान यहाँ।
यह चरित्र–निर्माण की कार्यशाला है, यह डॉ. आर्यरत्न पूनम की पाठशाला है।।

शिक्षक वर्ग को मिलता मार्गदर्शन, मानों मिले यहाँ प्रभु–दर्शन।
यह कर्मयोग की पाठशाला है, यह ज्ञान–विज्ञान की पूनम की पाठशाला है।।

यहाँ होता है शांत तन्मय, स्थिर हो जाता भटका मन।
यह सबकी अपनी पाठशाला है, यह परम उदार पूनम की पाठशाला है।।

अन्यत्र कहीं न मिलेगी ऐसी पाठशाला, यह उद्यम की पाठशाला है।
संस्कृत–संस्कृति फल फूल रही, यह सर्व अलौकिक पूनम की पाठशाला है।।

जे.पी. शूर निदेशक डी.ए.वी. प्रबंधकर्त्री समिति

डी.ए.वी. सूरजपुर ने निकाली शोभा यात्रा

केन्द्रीय आर्य सभा चण्डीगढ़ के सौजन्य से ऋषि दयानन्द के 196वें जन्मोत्सव पर एक भव्य शोभायात्रा का आयोजन किया गया जिसमें चण्डीगढ़, पंचकूला, मोहाली की डी.ए.वी. शिक्षण संस्थाओं तथा आर्य समाजों ने उत्साहपूर्वक बढ़–चढ़ कर भाग लिया।

डी.ए.वी. सीनियर पब्लिक स्कूल, सूरजपुर की शिक्षण, प्रशासनिक एवं सहायक कर्मचारियों एवं बच्चों ने एक अपूर्व शोभायात्रा निकाली। जिसमें अनेक झाँकियाँ निकाली गई। माननीय पद्मश्री विजेता डॉ. पूनम सूरी के नेतृत्व में पुनः जागरण को नवजागरण के रुप में पुनः दिनमान करने के अथक प्रयास को सशक्त ढंग से अभिव्यक्त किया गया। जिसका मूल उद्देश्य पुरातन ज्ञान को नवीनतम प्रयास से जोड़ना और नवीन पीढ़ी में वैदिक मूल्यों के साथ–साथ तकनीकी, अनुसंधानिक वैज्ञानिक प्रवृति को जागृत करना था।

डी.ए.वी. सूरजपुर ने अपनी झाँकी में स्वामी दयानन्द के दर्शन को विविध रूपों में प्रस्तुत किया। **स्वराज के सिपाही के अन्तर्गत** लाला लाजपत राय, भगत सिंह, श्यामा प्रसाद मुखर्जी, विक्रम बत्रा, विभूति शंकर डोडियाल के अपूर्व बलिदान को प्रदर्शित किया गया जो राष्ट्रभक्ति में डी.ए.वी. और आर्यसमाज के योगदान को प्रतिस्थापित कर रहा था। **कला, वाणिज्य, योग साधना, आयुर्वेद के नवोत्थान को प्रचारित किया गया।**

डॉ ममता गोयल ने विजेता पुरस्कार प्राप्त किया और सर्वस्व शक्ति के साथ भविष्य में भी आर्यसमाज एवं डी.ए.वी. सूरजपुर के माध्यम से शिक्षा एवं सामाजिक उत्थान में सेवा एवं सहयोग करने का प्रण दोहराया।

सोहन लाल डी.ए.वी. अम्बाला में अर्न्तराष्ट्रीय मातृभाषा दिवस मनाया गया

सोहन लाल डी.ए.वी. शिक्षा महाविद्यालय, अम्बाला शहर की हिन्दी संस्था द्वारा अर्न्तराष्ट्रीय मातृभाषा दिवस के उपलक्ष्य में भाषण प्रतियोगिता का आयोजन डॉ. नरेन्द्र कौशिक अध्यक्ष हिन्दी विभाग के मार्गदर्शन में किया गया। कार्यक्रम की अध्यक्षता डॉ. सुषमा गुप्ता जी ने की।

डॉ. नरेन्द्र कौशिक जी ने अपने वक्तव्य में छात्राध्यापकों को मातृभाषा के प्रचार प्रसार व दैनिक जीवन में हिन्दी अपनाने के लिए प्रेरित किया। इस अवसर पर भाषण प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। जिसमें महाविद्यालय के बी.एड. प्रथम वर्ष व द्वितीय वर्ष के छात्राध्यापकों ने बढ़–चढ़ कर भाग लिया और अपने विचारों को सबके साथ सांझा किया।

डॉ. सुषमा गुप्ता जी ने भी बताया कि आज के समय में हिन्दी सबसे अधिक बोली जाने वाली व गुगल पर सर्च की जाने वाली भाषा बन गई है और निरन्तर उत्थान की ओर बढ़ रही है। इस भाषण प्रतियोगिता के परिणाम इस प्रकार हैं:

काव्यात्मक प्रस्तुति के लिए प्रियंका को विशेष पुरस्कार प्रदान किया गया। इसके साथ ही अन्य प्रतिभागियों को भी पुरस्कार देकर सम्मानित किया गया। अन्त में डॉ. नरेन्द्र कौशिक ने कार्यक्रम में उपस्थित सभी श्रोताओं का धन्यवाद किया।

अलवर में महर्षि दयानन्द सरस्वती जयन्ती समारोह पर हुआ 151 कुण्डीय यज्ञ

आर्य कन्या विद्यालय समिति, श्री रामजीलाल आर्य कन्या विद्यालय समिति, अलवर जिले के समस्त आर्य समाज एवं जन सहयोग से महर्षि दयानन्द सरस्वती का जन्मोत्सव अत्यन्त हर्षोल्लास के साथ मनाया गया। महर्षि दयानन्द के सिद्धान्तों और वेद प्रचार, पर्यावरण शुद्धि, विश्वशांति, सुख, समृद्धि एवं महिला सशक्तिकरण हेतु विद्या मन्दिर मालवीय नगर, अलवर में 151 कुण्डीय महायज्ञ का आयोजन का आयोजन हुआ। अतिथियों को मंत्री श्री प्रदीप कुमार आर्य ने पीत वस्त्र अर्पित कर स्वागत किया। श्रीमती कमला शर्मा, निदेशक आर्य कन्या विद्यालय समिति के सभी को ध्वजारोहण के लिए आमंत्रित किया। यज्ञ स्थल वैदिक विद्या मन्दिर, मालवीय नगर, अलवर पर श्री जगदीश प्रसाद, प्रधान, आर्य कन्या विद्यालय समिति, अलवर के ओ३म् का ध्वज फरहा कर एवं दीप प्रज्जलित कर यज्ञ प्रारम्भ किया। समिति प्रदाधिकारियों द्वारा समिति कलैन्डर का विमोचन किया है।

151 कुण्डीय महायज्ञ के ब्रह्मा डॉ सूर्या देवी चतुर्वेदा, प्राचार्या, आर्य कन्या गुरूकुल शिवगंज ने प्रतिदिन यज्ञ करने का महत्व प्रतिपादित करते हुए यज्ञ करवाना। पं. अमर मुनि यज्ञ के महत्व पर प्रकाश डाला।

श्री जगदीश प्रसाद गुप्ता ने यज्ञ में उपस्थित सभी को साधुवाद दिया।

Registration No. R.N.I. 39\57
Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11\6066\2018-20
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103\2018-20
Posted at N.D.P.S.O. ON 04/05-03-2020

डी.ए.वी. सी. सै. स्कूल, हाथी गेट, अमृतसर में मनाया ऋषि जन्मोत्सव

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के जन्मदिवस के उपलक्ष्य डी.ए.वी. सी. सै. स्कूल, हाथी गेट, में यज्ञ का आयोजन किया गया। स्कूल की यज्ञशाला में मन्त्रोच्चारण के साथ आहुतियाँ डाल कर स्वामी का स्मरण व नमन किया गया।

स्कूल के प्रिंसीपल अजय बेरी ने विद्यार्थियों को महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के जीवन की विस्तृत जानकारी देते हुए बताया कि स्वामी जी ने गुरु विरजानन्द से दीक्षा लेकर महात्मा हंसराज जी जैसे महापुरुषों को प्रेरित किया जिन्होंने समाज उत्थान के लिए ऐसे कार्य किये हैं उनका ऋण कभी भी चुकाया नहीं जा सकता। उन्होंने कहा कि स्वामी दयानन्द जी भारतीय समाज को पाखण्डों, आडम्बरों व स्त्री–पुरुष भेदभाव से ऊपर उठाकर अज्ञानता के अन्धकार से ज्ञान के प्रकाश की ओर लेकर आए।

विधार्थियों को प्रेरित करते हुए उन्होंने कहा कि हमें महर्षि दयानन्द सरस्वती जी द्वारा दिखाये गए सन्मार्ग पर चलना चाहिए।

इस अवसर पर वाइस प्रिंसीपल श्री राजेश शर्मा, श्री राजपाल अग्रवाल, श्री मुकेश शास्त्री, श्री गीता बाली, ज्योति अरोड़ा तथा विधार्थी भी उपस्थित थे।

आर आर बावा डी.ए.वी. कॉलेज फॉर गर्ल्ज़, बटाला में "उत्सव-2020"

आर आर बावा डीएवी कॉलेज फॉर गर्ल्ज़, बटाला में उत्सव 2020 का आयोजन किया गया। समारोह के अध्यक्ष श्री एस. पी. मरवाहा चैयरमैन स्थानीय समिति थे। इस अवसर पर श्री सन्नी दियोल, मैबर पार्लियामैंट, गुरदासपुर मुख्यतिथि स्वरूप पधारे, जबकि श्री बालकृष्ण मित्तल जी, सचिव डीएवी कॉलेज प्रबन्धकर्तृ समिति, नई दिल्ली, सपत्नीक श्रीमती आशा मित्तल जी के साथ विशेष अतिथि स्वरूप उपस्थित हुए।

मुख्यतिथि ने ज्योति प्रज्ज्वलित करने के बाद गुब्बारे छोड़ कर उत्सव–2020 का विधिवत् आरम्भ किया। प्रिंसीपल महोदया ने कॉलेज के विषय में परिचयात्मक विवरण प्रस्तुत किया एवं कॉलेज द्वारा प्राप्त उपलब्धियों की सविस्तार चर्चा की।

मुख्यतिथि श्री सन्नी दियोल ने अपने अभिभाषण में शिक्षा के क्षेत्र में डीएवी के अभूतपूर्व योगदान की भी मुक्तकण्ठ से प्रशंसा की। उन्होंने अपनी सफलता का श्रेय अपने माता–पिता को दिया।

श्री बालकृष्ण मित्तल सचिव डीएवी कॉलेज प्रबन्धकर्त्री समिति, नई दिल्ली ने श्री सन्नी दियोल का धन्यवाद किया एवं उनके द्वारा क्षेत्र में करवाये जा रहे विकास कार्यों की प्रशंसा की।

इस अवसर पर लोकप्रिय पंजाबी गायक गुरविन्द्र गिल एवं प्रसिद्ध हास्य कलाकार डॉ. साहिब सिंह ने अपने सुन्दर प्रदर्शन से दर्शकों के मन को मोह लिया।

डी.ए.वी. गोहजू में महर्षि दयानंद सरस्वती जी का जन्म दिवस

डी.ए.वी. विद्यालय गोहजू में महर्षि दयानंद सरस्वती जी का जन्मोत्सव बड़े हर्षोल्लास व श्रद्धापूर्वक मनाया गया। सर्वप्रथम विद्यालय के प्रांगण में यज्ञ मंत्रोच्चारण सहित आहुतियां डाली गई। यज्ञ के बाद दयानंद सरस्वती जी के महान कार्यो के बारे में तथा भारतवर्ष को झूठ पाखंड कुरीतियों तथा अंधविश्वास से मुक्ति दिलाने वाले उन महान विभूति से अवगत करवाते हुए विद्यार्थियों ने कई प्रस्तुतियां दी जिसमें गीत, नाटक तथा भाषण प्रमुख थे। छात्रों ने अपनी प्रस्तुतियों से एक समय बांध दिया।

समापन समारोह में प्रधानाचार्य श्री जयदेव शर्मा ने महर्षि के जीवन पर प्रकाश डालते हुए कहा **महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती** आधुनिक भारत के महान चिन्तक, समाज–सुधारक थे जिन्होंने भारत को जोड़ने का काम किया। युवा पीढ़ी के संस्कारी होने पर बल दिया। उन्होंने कहा कि बड़ों का सम्मान करने से ही विद्या यश बल और बुद्धि की प्राप्ति होती है, यही हमारी संस्कृति है तथा हमें उन महान विभूतियों के जीवन आदर्श तथा पद चिन्हों पर चलना चाहिए और अपनी संस्कृति को पूरे विश्व में फैलाने का प्रण लेना चाहिए।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग के लिए **एस.के शर्मा** द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित **अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि.,** डब्ल्यू–30, ओखला, फेस–II, नई दिल्ली–110020 (दूरभाष : 26388830–32) से मुद्रित एवं कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन मंदिर मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित मो.–9868894601, 23362110, 23360059 सम्पादक – **पूनम सूरी**